* पूज्य *

श्री गोस्वामी पण्डित बिन्द जी महाराज

श्रीः

मोहन-मोहिनी

[बारहवां भाग]

रचयिता-

भारती-भूषण, कविता-कलाधर,
व्याख्यान-वारिधि, साहित्य-रत्न
श्री मानस हंस शिरोमणि-
आदि आदि अनेक उपाधि विभूषित-

गोस्वामी--

श्री पं० 'बिन्दुजी' महराज,

रिसर्च स्कालर श्रीरामचरित मानस ।

प्रकाशक—

प्रेमधाम,—वृन्दावन.

सन १९४९]   [मूल्य १॥)

प्रकाशक—
प्रेम धाम
वृन्दाबन ।

सूचना

बिना लेखक की आज्ञा कोई सज्जन इस पुस्तक के पद प्रकाशित करने का प्रयत्न न करें ।

विनीत—
'बिन्दु'

मुद्रक—
एगँलो अरेबिक प्रेस,
कोठी राजा दीनदयाल
दीन दयाल रोड
लखनऊ

समर्पण

श्रीयुत पूज्य पिताजी!

न भाषा, भाव, शैली है, न कविता सार-गर्भित है।
हृदय का प्रेम है, जो आपको सादर समर्पित है॥

आपका प्रिय पुत्र -
'बिन्दु''

तेरहवां संस्करण

अपने मोहन से—

प्यारे मोहन

मैं चाहता था कि मेरी यह मर्मस्पर्शिनी वेदना केवल आप तक ही विदित होती तो ठीक था, परन्तु आपने इस वेदना को घर-घर पहुँचा दिया और नाम भी क्या रक्खा? 'मोहन मोहिनी' धन्य प्यारे धन्य! अच्छा, यदि ऐसी ही इच्छा है तो मैं भी जी-भर कर सुनाने को तैय्यार हूँ, क्या जाने फिर यह मानव जन्म दो? या न दो? तो फिर कसर ही क्यों रक्खूँ? तुम सुनने में नहीं हिचकते तो मैं सुनाने में क्यों हिचकूँ? अपनी पुकार के बारह हिस्से कर चुका हूँ, और यह बारहों एक-साथ नत्थी करके सरकार के कर-कमलों में पेश कर रहा हूँ, यदि मेरी इतनी ही निर्लज्जता पर रीझ जाओ तो अच्छा है। वरना जितना और सुनना चाहोगे उतना और सुनाऊँगा।

फाल्गुन पूर्णिमा
सं० १९९८

तुम्हारा ही भला या बुरा—
"बिन्दु"

पद-सूची

'ऐ'

'ओ'

'क'

'ख'

'ग'

'भ'

'म'

"य"

"र"

'ल'

'स'

जय श्री हरिः

[प्रथम भाग]

पद १

जय जगपति, जय जनपति रघुकुल पतिराम ।
शोभित श्री सिय समेत, छविधर अभिराम ॥
जय कृपाल, प्रणतपाल, दायक विश्राम ।
घन सम तन द्युति ललाम, सुगति शांति धाम ॥
भूमि भार हरन हार, जय अनन्त नाम ।
त्रिभुवन विख्यात विमल पावन गुण ग्राम ॥
नेति नेति गावत ऋग्, यजु, अथर्व साम ।
पूर्ण 'बिन्दु' पूर्ण सिन्धु परम पूर्ण काम ॥

२ पद

है दयामय, दीन पालक, अज, विमल, निष्काम हो।
जगतपति, जग व्याप्त, जगदाधार, जग विश्रम हो।
दिवस निशि जिसको, प्रबल भव रोग की, हो यन्त्रणा।
उस दुखी जन के लिए तुम वास्तविक सुखधाम हो।
क्लेश इस कलकाल का, उसको कभी व्यापे नहीं।
हृदय में जिसके तुम्हारा, ध्यान आठो याम हो॥
एक ही अभिलाष है पूरी इसे करदो प्रभो।
मेरी रसना पर सदा रस 'बिन्दु' मय तव नाम हो।

३ पद

अधमों को नाथ उधारना, तुम्हें याद हो कि न याद हो।
मद खल जनों का उतरना, तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
प्रहलाद जब मरने लगा, खञ्जर पै सर धरने लगा।
उस दिन का खम्भ विदारना, तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
धृतराष्ट्र के दरबार में, दुखी द्रोपदी की पुकार में।
साड़ी के थान सँवारना, तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
सुरराज ने जो किया प्रलय, ब्रजधाम बहने के समय।
गिरिवर नखों पर धारना, तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
दृग 'बिन्दु' जिनके निराश हों, केवल तुम्हरी आश हो।
उनकी दशायें सुधारना तुम्हें याद हो कि न याद हो।

पद ४

दशा मुझ दीन की भगवन्, सम्हालोगे तो क्या होगा।
अगर चरणों की सेवा में लगा लोगे तो क्या होगा ॥
मैं नामी पातकी हूँ, और नामी पाप हर तुम हो।
जो लज्जा दोनो नामो की, बचा लोगे तो क्या होगा ॥
जिन्होंने तुमको करुणाकर, पतित पावन बनाया है।
उन्ही पतितों को तुम पावन, बना लोगे तो क्या होगा ॥
यहां सब मुझसे कहते हैं, तू मेरा है! तू मेरा है!
मैं किसका हूँ? ये झगड़ा तुम चुका लोगे तो क्याहोगा॥
अजामिल गीध, गणिका, जिस दया गंगा में तरते हैं।
उसी में 'बिन्दु' सा पापी, मिला लोगे तो क्या होगा ॥

पद ५

जिधर भी मैं देखता हूँ मुझको नज़र वो घनश्याम आरहा है।
जगत की हर एक वस्तुओं में, प्रकाश अपना दिखा रहा है॥
ग्रहादि, नक्षत्र रविसुधाकर, निशा, दिवस, वायु व्योम, जलधर।
अनेक रंगों के रूप भरकर, सभी के दिलको लुभा रहा है॥
सघन में, निर्जन में, बन चमन में, धरा में धामों में धान्य धन में।
हरेक तन में, हरेक मन में, वो नन्द नन्दन समा रहा है॥
कभी वो माखन चुरा रहा है, कभी वो गायें चरा रहा है।
कभी वो बंसी बजा रहा है, कभी वो गीता सुना रहा है।
मिला वो जब कृष्ण राम बनकर, हरेक अवतार नाम बनकर।
तो 'बिन्दु' भी उसका धाम बनकर, दृगों में उसको बसा रहा है॥

पद ६

कन्हैया प्यारे दुलारे मोहन, बजादो फिर अपनी प्यारी बंशी ॥
जो भक्त बेसुध हैं जी उठेंगे, सुनेंगे जिस दम तुम्हारी बंशी ॥
जो चलता दुष्टोंका वार जग में, जो बढ़ता पापों का भार जगमें ।
तो लेके कृष्णावतार जग में, बजाते मोहन मुरारी बंशी ॥
सभी निशा मोह से जगे थे, स्वधर्म पालन में सब लगे थे ।
सभी के दिल प्रेम में रंगे थे, अधर पे जब तुमने धारी बंशी ॥
कभी बनी बंशी प्रेम सूरत, कभी बनी बंशी ज्ञान मूरत ।
पड़ी जो सत्कर्म की जुरूरत, तो गीता बनकर पुकारी बंशी ॥
बहे यमुन प्रेम 'बिन्दु' तन में, हों इन्द्रियाँ गोपियाँ लगन में ।
तो फिर इसी दिल के बृन्दाबन में, बजायें बाँके बिहारी बंशी ॥

पद ७

कृपा करो हम पै श्याम सुन्दर, ऐ भक्त वत्सल कहाने वाले ।
तुम्हीं हो धनुशर चलाने वाले, तुम्हीं हो मुरली बजाने वाले ॥
तुम्हें पुकारा था द्रोपदी ने, बचाया प्रहलाद को तुम्हीं ने ।
तुम्हीं हो खम्भे में आने वाले, तुम्हीं हो साड़ी बढ़ाने वाले ॥
तुम्हीं ने ब्रज से प्रलय हटाया, समुद्र में सेतु भी बनाया ।
ऐ जल पै पत्थर तिराने वाले, ऐ नख पै गिरिवर उठाने वाले ॥
इधर सुदामा ग़रीब ब्राह्मण, उधर दुखी दीन था विभीषण ।
उसे भी लङ्का दिलाने वाले, इसे त्रिलोकी लुटाने वाले ॥
ऐ कौशिला सुत यशोदा नन्दन, अधीन दुख 'बिन्दु' के निकन्दन ।
छुड़ा दो मेरे भी जग के बन्धन, ऐ गज के फन्दे छुड़ाने वाले ॥

पद ८

हमें निज धर्म पर चलना, बताती रोज रामायण।
सदा शुभ आचरण करना सिखाती रोज रामायण॥
जिन्हें संसार सागर से, उतर कर पार जाना है।
उन्हें सुख से किनारे पर, लगाती रोज रामयण॥
कहीं छवि बिष्णु की बाँकी, कहीं शङ्कर की है झाँकी।
हृदय आनन्द झूले पर, झुलाती रोज रामायण॥
सरल कविता की कुञ्जों में, बना मन्दिर है हिन्दी का।
जहाँ प्रभु प्रेम का दर्शन कराती रोज रामायण॥
कभी वेदों के सागर में, कभी गीता की गंगा में।
कभी रस 'बिन्दु' में मनको, डुबाती रोज रामायण॥

पद ९

पुकार सुनलो ज़रा, काली कामली वाले।
झलक दिखादो सुघर- श्याम ब्रज गली वाले॥
है इन्तज़ार सभी को, तुम्हारे दर्शन का।
कभी तो आके मिलो, ग्वालमण्डली वाले॥
ये कहके ढूंढती हैं, गोपियाँ गोपाल तुम्हें।
छिपे कहाँ हैं वो, वृषभानु की लली वाले॥
जिसे सुनाके जमाने को तुमने मोह लिया।
सुना दो तान वही मोहनी मुरली वाले॥
न दोगे दीनों के दृग 'बिन्दु' को दर्शन की दवा।
जियेंगे कैसे भला, दिल की बेकली वाले।

पद १०

हैं आँख वो जो राम का दर्शन किया करें।
वो शीश है चरणों में जो बन्दन किया करें।
बेकार वो मुंह है, जो हो वादाबिवाद में।
मुख वह है, जो हरिनाम का सुमिरन किया करें।
हीरों के कड़ों से नहीं शोभा है हाथ की।
है हाथ वो जो नाथ का पूजन किया करें।
मरकर भी अमर नाम है उस जीव का जग में।
प्रभु प्रेम पे बलिदान जो जीवन किया करें।
कविवर वही है, श्याम के सुन्दर चरित्र का।
रसना के जो रस 'बिन्दु' से वर्णन किया करें।

पद ११

इस अपार संसार सिन्धु में राम नाम आधार है।
जिसने मुख से राम कहा उस जन का बेड़ा पार है॥
इस भवसागर में तृष्णा नीर भरा है।
फिर कामादिक जलजीवों का पहरा है॥
यदी कहीं कहीं पर भक्ति सीप होती है।
तो उसके अन्दर राम नाम मोती है॥
उन्हीं मोतियों से नर देही का सुन्दर शृंगार है।
जिसने मुख से राम कहा उस जन का बेड़ा पार है॥
कलिकाल महानद अगम विषय जलधारी।
उठती है माया-लहर भँवर-भ्रम भारी॥
इसमें जब नर हरिनाम नाव पाता है।
तो पल भर में ही पार उतर जाता है॥
राम नाम रस 'बिन्दु' कुशल केवट ही खेवनहार है।
जिसने मुख से राम कहा उस जन का बेड़ा पार है॥

पद १२

एक अर्ज़ मेरी सुन लो, दिलदार हे कन्हैया।
कर दो अधम की नैया, भव पार हे कन्हैया॥
अच्छा हूँ या बुरा हूँ, पर दास हूँ तुम्हारा।
जीवन का मेरे, तुम पर है भार, हे कन्हैया॥
तुम हो अधम जनों का, उद्धार करने वाले।
मैं हूँ अधम जनों का, सरदार हे कन्हैया॥
करुणा निधान करुणा, करनी पड़ेगी तुमको।
वरना ये नाम होगा, बेकार हे कन्हैया॥
ख्वाहिश ये है कि मुझसे, दृग 'बिन्दु' रत्न लेकर।
बदले में देदो अपना, कुछ प्यार हे कन्हैया॥

पद १३

बंशी वाले क्यों नहीं आते हमारी आह पर।
मस्त हैं हमतो तुम्हारे दर्शनों की चाह पर॥
खैरख्वाहों पर अगर, खुश होगये तो क्या हुआ।
हम तो जब जाने कि खुश हो जाव, इस बदख्वाह पर॥
रूप धन का और बाहों का भी बल जाता रहा।
अब तो है निर्वाह निर्बल का तुम्हारी बाँह पर॥
युद्ध अब तक जो कठिन कलिकाल से करते थे हम।
फैसला है उसका अब घनश्याम शाहन्शाह पर॥
फ़ायदा यह नाथ के यश 'बिन्दु' बरसाने में है।
भूले भटके पातकी आते हैं सीधी राह पर॥

पद १४

ा निशिदिन भज हरि का नाम,
श्री राम कृष्ण श्री कृष्ण राम ।
हैं सुख कर आनन्द धाम,
श्री राम कृष्ण श्री कृष्ण राम ॥
व कान्हर चित चोर कहो,
या रघुबर अवध किशोर कहो ।
दिन प्रति घड़ी पल आठो याम,
श्री राम कृष्ण श्री कृष्ण राम ॥
राधावर के चरण गहो,
जानकी रमण की शरण चलो ।
ो बन कर दिल से गुलाम,
श्री राम कृष्ण श्री कृष्ण राम ॥
व सा कोई कृपालु नहीं,
माधव सा कोई दयालु नहीं ।
त जन के आते हैं काम,
श्री राम कृष्ण श्री कृष्ण राम ॥
शर धारी मुरली धारी,
जय रघुबंशी जय बनवारी ।
प्रेम 'बिन्दु' दोनों का धाम,
श्री राम कृष्ण श्री कृष्ण राम ॥

पद १५

है बहुत मन माया में, अब हरि से ध्यान लगा लेना
कर केशव को भज कर, यह जीवन शुद्ध बना लेना
गड़ों को त्याग ज़रा, बेख़बर नींद से जाग ज़रा
से कर अनुराग ज़रा, सत संग का रंग चढ़ा लेना

क़र्ज़ में नर तन लिया था, उसको तू बिसरा गया।
सूद का तो ज़िक्र क्या है, मूल धन भी खा गया॥
धर्म की डिग्री हुई, अब काल कुर्की आयगी।
ज़िन्दगी तेरी अधम, नीलाम करदी जागी॥
यदि यम बन्धन से बचना है, नरकों में कभी न पचना है।
तो झूठी माया रचना है, दिल पर यह ज्ञान जमालेना॥
अपनी चालों में तुझे, कामादिकों नें फसा लिया।
पाप की हुंडीं ख़रीदी, स्वाँस रत्न लुटा दिया॥
अब पता तुझको चलेगा, अपने उस नुक़सान का।
होने वाला है दिवाला पाप की दूकान का॥
दृग 'बिन्दु' न व्यर्थ लुटाना अब, ख़ाली करना न ख़ज़ाना अब।
आख़िर का सोच ठिकाना अब, जो पूंजी बचे बचा लेना॥
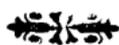
पद १६

श्याम चरणों में मनको लगाये जायेंगे।
ज्योति जीवन की जग में जगाये जायेंगे॥
हज़ार बार कृपा गार से क़रार हुआ।
मगर न उनका भजन दिलसे एक बार हुआ॥
विषय में, भूक में निद्रा में दिन गुज़रते हैं।
मनुष्य होके भी पशुओं का काम करते हैं॥
अब तो बिगड़ी दशा को बनाये जायेंगे॥ श्याम०
समझ रहे हैं कि संसार हमारा होगा।
ये पुत्र मित्र ये परिवार हमारा होगा॥
नहीं है ध्यान कि जब काल प्राण लेता है।
तो ग़ैर क्या हैं ये तन भी न साथ देता है॥
ऐसी दुनियाँ से नाते हटाये जायेंगे। श्याम०

अघों के भार बेशुमार हो गये भगवन् ।
कि जिससे थक गये लाचार होगये भगवन ॥
न तोड़ो कर्म के बन्धन तो कुछ रहम करदो ।
न सब घटाओ तो थोड़ासा वज़न कम करदो ॥
अब न सर पर ये बोझे उठाये जायेंगे ॥ श्याम०
सहे जो कष्ट सहे शूल जो हुई सो हुई ।
किये जो कर्म किये भूल जो हुई सो हुई ॥
दयालु आख़िरी दाता यही हमारा है ।
हमें भी तारो जो लाखों को तुमने तारा है ॥
दुख के दृग 'बिन्दु' तुम पर चढ़ाये जायेंगे । श्याम०

पद १७

भज तुलसी दासं मन भज तुलसी दासं ।
यत्पद 'जलजम्मरणं' शभ मुक्ताभास ॥ भज तुलसी०
सिय लक्ष्मण युत रघुपति, जन प्राणाधरं ।
बसत सदा निशिवासर, यद्धृदयागारं ॥ भज तुलसी०
यस्यादर्श अनूपं, दुख दारिद दमनं ।
कवि कुल जीवन रूपं; कलिमल ज्वर शमनं । भज तुलसी०
यत्कृत मखद सदैवं श्री हरि गुण ग्रामं ।
श्रवण करत हर गिरिजा, कपिवर बलधामं ॥ भज तुलसी०
सुन्दर सरल सुहावनि, कविता गम्भीरं ।
मन रंजन दृग अंजन, भंजन भव भीरं ॥ भज तुलसी०
भाषा छन्द रसामृत, जे नर कृत पानं ।
ते वैराग्य विभूषण रत हरि पद ध्यानं ॥ भज तुलसी०
द्वादश ग्रन्थ निरूपणं, प्रेम पथिक प्राणं ।
अधम अधीन सहायक, दायक निर्वाणं ॥ भज तुलसी०
रामायण पद ललितं, निर्मल नवनीतं ।
रसना 'बिन्दु' निरन्तर, श्रवत कथा गीतं ॥ भज तुलसी०

[दूसरा भाग]

पद १८

ओ लला नन्दके तू खबर ले हमारी भला।
ओ मुरारी तिहारी है न्यारी कला॥ ओ लला०
दीनों का स्वामी है, अन्तर्यामी है।
जगत का रखवाला।
आजा आजा ऐ गोकुल बसइया मेरे।
आजा बांके बिहारी कन्हइया मेरे॥
फिर तो एक बार नजर मेहर की चला॥ ओ लला०
मदन मोहन तुझे आरत दुखी जन याद करते हैं।
तेरे ही दरपे अपने दुख की वो फ़रियाद करते हैं॥
सगा कोई नहीं अपना न कोइ अपना प्यारा है।
तेरे भक्तों को तेरे नाम का केवल सहारा है॥
दीनों के है दृग 'बिन्दु' का तुझपर ही फ़ैसला॥ ओलला०

पद १९

अब आजारे मुरली वाले झलक दिखलाजा।
हाँऽऽ प्यासे नैनों की प्यास बुझाजा॥ अब०
उजड़ी सी झोपड़ी में बुलाता हूँ तुझे श्याम।
वीराने में मेहमान बनाता हूँ तुझे श्याम॥

गर तुझको ग़रीबों की ग़रीबी से प्यार है।
तो मुझ ग़रीब को भी तेरा इन्तेज़ार है।
हाँऽऽ दिलके दर्दों को आकर मिटाजा ॥ अब०
वन्दन के लिये वेद का साधन भी नहीं है।
पूजन के लिये धूप या चन्दन भी नहीं है॥
अर्पण करूँ तो क्या करूँ दल फूल भी नहीं।
भोजन धरूँ तो क्या धरूँ फल मूल भी नहीं
हाँऽऽ रूखो भाजी का भोग लगाजा ॥ अब०
पूजा भी करूँगा तो मैं इस तौर करूँगा।
धन हीनता की धूप को सुलगा के धरूँगा॥
दुख, दोष का, दुर्भाग्य का देदूँगा दीपदान।
नैवेद्य निर्बलत्व का, पीड़ित दशा का पान॥
हाँऽऽ ऐसे पूजन का मान बढ़ा जा ॥ अब०
काया ज़मी पै बोए हैं कुछ बीज तेरे नाम।
घनश्याम ! इनके वास्ते बनजा तुही घनश्याम॥
अब इस दुखी किसान का तुझपर ही नज़र है।
दो चार दया 'बिन्दु' बरसने की कसर है।
हाँऽऽ सूखी खेती को सब्ज़ बना जा ॥ अब०

पद २०

कन्हैया तुम्हें एक नज़र देखना है।
जिधर तुम छिपे हो उधर देखना है॥
अगर तुम हो दीनों की आहों के आशिक़।
तो आहों का अपनी असर देखना॥

उबारा था जिस हाथ ने गीध गज को।
उसी हाथ का अब हुनर देखना है॥
बिदुर भीलनी के जो घर तुमने देखे।
तो हमको तुम्हारा भी घर देखना है॥
टपकते हैं दृग 'बिन्दु' तुमसे ये कहकर।
तुम्हें अपनी उल्फ़त में तर देखना है॥

पद २१

मन ! अब तो सुमिर ले राधेश्याम।
राधेश्याम, मन ! सीताराम॥
अब तक तो जग में भरमाया,
उचित मार्ग पर कभी न आया।
अब भज ले हरिनाम॥ मन०॥
अभी तक तो भटकता था जगत के व्यर्थ जालों में।
मगर अब सोचकर कुछ चल ? ज़रा सच्चे ख़्यालों में॥
जो तेरे पास हरि सुमिरन का सच्चा पास होवेगा।
तो कर विश्वास तेरा स्वर्ग ही में बास होवेगा॥
कृष्ण लिखा हो जब इस तनमें,
यमके फन्द कटैं सब छनमें॥

कृष्ण नाम सुख-धाम॥ मन॥
जिसे तू मेरी कहता है वो अन्तिम दिन यहीं होगी।
तू जिस माया में भटका है वो कुछ तेरी नहीं होगी॥
जो धन दौलत कमाया है यहाँ ही सब धरा होगा।

भजन हरि का किया है जो वही साथी तेरा होगा।
पाप 'बिन्दु' का घड़ा फोड़ दे'
व्यर्थ बासना डोर तोड़ दे ॥
करले कुछ विश्राम ॥ मन ॥

पद २२

जगत झूठा नज़र आया ॥ जगत० ॥
मतलब की है सगाई,
बातों की है सफ़ाई।
वृथा ही भरमाया ॥ जगत०
कोई कहता है कि सोने का महल बनवायेंगे।
कोई कहता है कि शाहंशाह हम बन जायेंगे।
पर न यह समझे कि इस जीवन की क्या औक़ात है॥
चार दिन की चाँदनी है फिर अँधेरी रात है॥
यह मनके हैं बबूले,
इनमें क्यों व्यर्थ भूले।
धोखे की है य माया ॥ जगत० ॥
बाँधकर मुट्ठी किया था गर्भ में इक़रार क्या।
श्याम के सुमिरन की तुझको अब नहीं दरकार क्या ॥
उस बड़े दरबार में मुँह कौनसा दिखलायेगा।
बन्द हाथों आया था और खाली हाथों जायेगा ॥
अब दृग के 'बिन्दु' खो मत।
दुनिया को व्यर्थ रो मत।
हरि को ही दे दे काया ॥ जगत० ॥

पद २३

मिलूँ गर मेरे मन से मन, मिलाते हो मदन मोहन।
जियूं, गर जान खुद बनकर, जिलाते हो मदनमोहन॥
नहीं इस चित्त चंचलको अलख लखने की ख्वाहिश है।
लखूँ, गर साँवली सूरत लखाते हो मदन मोहन॥
नहीं क़ाबिल हूँ मैं इसके कि अनहद नाद को सुनलूँ।
सुनूं गर रस भरी मुरली सुनाते हो मदन मोहन॥
तपस्या है नहीं इतनी कि योगी सिद्ध बन जाऊँ।
बनूँ, गर अपना तुम प्रेमी बनाते हो मदन मोहन॥
नहीं ताक़त है ब्रह्मानन्द के एक 'बिन्दु' पीने की।
पियूँ गर प्रेम के प्याले पिलाते हो मदन मोहन॥

पद २४

ग़जब की बाँसुरी बजती है वृन्दाबन बसाइया की।
करूँ तारीफ़ मुरली की या मुरलीधर कन्हैया की॥
जहाँ चलता न था कुछ काम तीरों से कमानों से।
विजय नटवर की होती थी वहाँ मुरली की तानों से॥
मुरली वाले मुरलिया बजादे ज़रा।
उससे गीता का ज्ञान सिखादे ज़रा।
तेरी बन्शी में भरा है वेद मन्त्रों का प्रचार।
फिर वही बन्शी बजाकर करदे भारत का सुधार॥
तनपै हो काली कमलिया और गले गुञ्जों का हार।
इस मनोहर वेश में आजा सँवलिया एक बार॥

बृज की गलियों में गोरस लुटादे ज़रा।

मुरली वाले मुरलिया बजादे ज़रा ॥

सत्यता के स्वर हैं जिसमें और उल्फ़त की है लय।

ऐक्यता की रागिनी है वह, कि करती है विजय ॥

जिसके एक लहजें में तीनों लोक का दिल हिल उठे।

तेरे भक्तों को ज़ुरूरत अब उसी मुरली की है ॥

ऐसी मुरली की तान सुनादे ज़रा।

मुरली वाले मुरलिया बजादे ज़रा ॥

कर्म यमुना 'बिन्दु' हो, और धर्म का आकाश हो।

चाह की हो चाँदनी, साहस का चन्द्र विकास हो ॥

फिर ये बृन्दाबन हो भारत, प्रेम हास विलास हो।

मिलके सब आपस में नाचें, इस तरह का रास हो ॥

फिर से जीवन की ज्योति जगादे ज़रा।

मुरली वाले मुरलिया बजादे ज़रा ॥

पद २५

जो करुणाकर तुम्हारा बृज में फिर अवतार हो जाये।

तो भक्ती का चमन उजड़ा हुआ गुलज़ार हो जाये ॥

ग़रीबों को उठालो साँवले गर अपने हाथों से।

तो इसमें शक़ नहीं दीनों का जीर्णोद्धार हो जाये ॥

लुटाकर दिल जो बैठे हैं, वो रो रो कर ये कहते हैं।

किसी सूरत से सुन्दर श्याम का दीदार हो जाये ॥

बजादो रस भरी अनुराग की वह बाँसुरी अपनी ॥

कि जिसकी तान का हर तनमें पैदा तार हो जाय ॥

पड़ी भव सिन्धु में दीनों के है दृग 'बिन्दु की नइया।

कन्हैया तुम सहारा दो, तो बेड़ा पार हो जाये ॥

पद २६

क्या ही मजे से बजती है घनश्याम की बन्शी
मोहन बजादो फिर वही बिश्राम की बन्शी ॥
बन्शी की मधुरता का मज़ा मिलता है मुझको ।
जिस वक्त़ बजाता हूँ तेरे नाम की बन्शी ॥
अधरों पै उसे रख के बजाते थे जिधर तुम ।
बजती थी उधर प्रेम के पैग़ाम की बन्शी ॥
उस बाँस की बन्शी की कशिश का था ये दावा ।
आशिक़ थीं बेशुमार तने चाम की बन्शी ॥
बन्शी को बजाते हुए दृग 'बिन्दु' में तुम हो ।
जब बजने लगे आख़िरी अंजाम की बन्शी ॥

पद २७

तेरी कंचन सी काया पल में ढल जाय ।
बालक युवा जरठ पन बीते,
अन्त समय अग्नी में जल जाय । तेरी० ॥
गुज़ारता है जो दिन रात हँसी खेलों में ।
जिन्दगी बीत जायगी इन्ही झमेलों में ॥
तू तो ग़फ़लत में है तुझको पता न चलता है ।
हर एक स्वाँस तेरा क़ीमती निकलता है ॥
जगत जाल में भटक रहा है,
स्वर्ण घड़ी बातों में टल जाय ॥ तेरी० ॥
तेरे आमालों का सच्चा हिसाब क्या होगा ।
मनुष्य जन्म पै तेरा जवाब क्या होगा ॥

दिलके काँटे पै पाप पुण्य का वज़न करले।
कमी है धर्म में तो श्याम का भजन करले॥
जीवन क्षणिक भरोसा क्या है ?
जैसे 'बिन्दु' सिन्धु मिल जाय॥ तेरी०॥

पद २८

प्रभो मुझको सेवक बनाना पड़ेगा।
कुटिल पर कृपा भाव लाना पड़ेगा॥
जिन जिन का कष्ट तुमने प्रभो दूर कर दिया।
उन सबने जहाँ में तुम्हें मशहूर कर दिया॥
शोहरत सुनी तो दास भी दरबार में आया।
कुछ दीन दशाओं को भी नज़राने में लाया॥
बुरा, हूँ, भला हूँ, या जैसा भी हूँ मैं,
ग़ुलामी के पद पर बिठाना पड़ेगा॥ प्रभो०
ख़ाली भी मैं फिर जाऊँ तो कुछ ग़म न रहेगा।
पर याद रहे सारा ज़माना ये कहेगा॥
क़ानून कृपा मय का इसी से बदल गया।
अब दीनबन्धुता का दिवाला निकल गया॥
जो है लाज रखनी, तो दृग 'बिन्दु' पर ही,॥
दया का ख़ज़ाना लुटाना पड़ेगा॥ प्रभो०

पद २९

बन्शी वाले हमारी ख़बर लेना॥
विपत्ति पांडवों की तुमने बाँट ली आकर।
तुम्हीं ने क़ैद देवकी की काट दी आकर॥

तुम्हीं ग़रीबों के हो मान बढ़ाने वाले।
बिदुर के घर में भाजी भोग लगाने वाले॥
हम ग़रीबों पै कुछ तो नज़र देना॥ बन्शी०॥
तुम्हें पुकारतीं गौवें कहाँ हो श्याम मेरे।
वो बृज की भूमि कह रही कहाँ आराम मेरे॥
हम भी अरमान दर्शनों का लिये बैठे हैं।
तुम्हारे वास्ते दिल जान दिये बैठे हैं॥
दीन दुखियों की झोली भी भर देना बन्शी०॥
तुम्हीं ने चैन की बन्शी बजाई थी बृज में॥
तुम्हीं ने रास की लीला रचाई थी बृजमें॥
तुम्हीं हो नन्द की गौवों के चराने वाले।
तुम्हीं माखन के वो मिश्री के चुराने वाले॥
फिर से अपना वो अवतार, धर लेना॥ बन्शी०
तुम्हारे नाम की रटना लगा रहा भगवन्।
दया निधान के गुण गान गा रहा भगवान्॥
ज़रा हमारी तरफ़ भी नज़र उठाओ तो।
अधम अधीन को भव जाल से छुड़ाओ तो॥
'बिन्दु' आँसू के आँखों से हर लेना। बन्शी॥०

पद ३०

मुझपर भी दया की करदो नज़र,
ऐ श्याम सुँदर ऐ मुरलीधर॥
कुछ दीनों के दुख की लेलो ख़बर,
ऐ श्याम सुँदर ऐ मुरलीधर॥
आरत जन तुमको पुकार रहे,
आने की बाट निहार रहे।

फिर छिपके कहाँ बैठे नटवर,
ऐ श्याम सुँदर ऐ मुरलीधर ॥
बृज बाला व्याकुल रहती हैं,
ग्वालों की टोलियाँ कहती हैं ॥
कब आओगे कान्ह कुँवर बनकर,
ऐ श्याम सुँदर ऐ मुरलीधर ॥
जिस बंशी ने प्रेम प्रकाश किया,
रस दायक रास विलास किया ।
बज जाय वही बंशी घर घर,
ऐ श्याम सुँदर ऐ मुरलीधर ॥
बिसरादो इन्हें, या सम्हालो इन्हें,
ठुकरादो चहे अपनालो इन्हें ।
हग 'बिन्दु' हैं आपके पेशे नजर,
ऐ श्याम सुँदर ऐ मुरलीधर ॥

पद ३१

तेरी हीरा जैसी स्वाँसा बातों में बीती जाय रे मन--
राम कृष्ण बोल ॥
गंगा यमुना खूब नहाया गया न दिल का मैल ॥
घर धन्धों में लगा हुआ है ज्यों कोल्हू का बैल ॥
तेरे जीवन की आशा बातों में बीती जाय रे मन--
राम कृष्ण बोल ॥
कियान पौरुष आकर जग में दिया न कुछ भी दान ।
मेरी तेरी करता करता निकल गया यह प्रान ॥
जैसे पानी बीच बताशा, बातों में बीती जाय रे मन--
राम कृष्ण बोल ॥

पाप गठरिया सर पर लादे रहा भटकता रोज़।
प्रेम सहित राधा माधव की किया न कुछ भी खोज॥
झूँठा करता रहा तमाशा, बातों में बीती जाय रे मन—
राम कृष्ण बोल॥
नस नस में, प्रति रोम रोम में, राम रमा है, जान।
प्रकृति 'बिन्दु' के कण कण में भी उसको तू पहचान॥
उससे मिलने की अभिलाषा, बातों में बीती जाय रे मन—
राम कृष्ण बोल॥

पद ३२

श्याम प्यारे दिलदार, अपनी झलक दिखादो॥
श्याम प्यारे दिलदार, मुरली वाले दिलदार।
मोहन प्यारे दिलदार, अपनी झलक दिखादो॥
है दिल में याद तुम्हारी लबों पै आह भी है।
है दर्द सीने में हसरत भरी निगाह भी है॥
ये है भरोसा कि सूरत कभी दिखा दोगे।
तुम्हीं ने दर्द दिया है तुम्हीं दवा दोगे॥
श्याम प्यारे दिलदार, अपनी झलक दिखादो।
विदुर की भाजी वो भीलन के फल क़बूल गये॥
तो आज किस लिये दावत हमारी भूल गये॥
न ध्यान दीन पुकारों, पै कुछ दिया कान्हा।
बतादो सख्त जिगर कब से कर लिया कान्हा॥
श्याम प्यारे दिलदार, अपनी झलक दिखादो॥
दही के, दूध के, बृज ग्वालिनों से दान लिये।
सुदामा विप्र को तन्दुल पै तीन लोक दिये॥
वो प्यार, और सखावत को, फिर दिखा जाओ।

ये बात सच है या झूँठी, ज़रा बता जाओ ॥
श्याम प्यारे दिलदार अपनी झलक दिखादो ।
हो संग दिल, तो मोम दिल बनाही लेंगे कभी ॥
न कैसे आओगे बेशक बुला ही लेंगे कभी ।
यही वजह है कि दृग 'बिन्दु' के फुहारे लिये ॥
ये धोते रहते हैं आँखों के घर तुम्हारे लिये ।
श्याम प्यारे दिलदार, अपनी झलक दिखादो ॥

पद ३३

जिसकी चितवन का इशारा दिल में है ।
बस वही दिलका सहारा दिल में है ॥
हर जगह पर इसकी हमको थी तलाश ।
वह दिले रहज़न हमारा दिल में है ॥
बस गया जिस दिन से दिल में साँवला ।
क्या बतायें क्या नज़ारा दिल में है ॥
दर्दे दिल को, दिल से क्यो रुख़सत करें ।
यह भी एक दिलवर का प्यारा दिल में है ॥
'बिन्दु' आँखों के ये देते हैं सुबूत ।
प्रेम के गंगा की धारा दिल में है ॥

पद ३४

दिल तो प्यारा है मगर दिल से भी प्यारा तू है ।
पर ग़ज़ब ये है कि इस दिल में भी न्यारा तू है ॥
दिल दुखाने का जो दावा भी करूँ किस पै करूँ ।
दर्दे दिल तू ही है, और दिल भी हमारा तू है ॥

मुझको तेरे सिवा कोई भी नज़र आता नहीं ॥
रोशनी जिसमें है, आँखों का वो तारा तू है ॥
तेरा कब्ज़ा है हरेक दिल पै, कोई दे, या न दे ।
दिल दुलारा है तेरा दिल का दुलारा तू है ॥
'बिन्दु' आँसू के बहा बैठे हैं उल्फ़त की नदी
मैं हूँ मँझधार में, घनश्याम किनारा तू है ॥

[तीसरा भाग]

पद ३४

तुमने घनश्याम आधीनों को जो तारा होगा ।
तो कभी हमको भी तरने का सहारा होगा ॥
हम जो मशहूर हैं पापी तो तुम पतित पावन ।
तुम न होगे तो भला कौन हमारा होगा ॥
ग़म न होगा हमें बरबाद या पामाल करो ।
नाम हर हाल में बदनाम तुम्हारा होगा ॥
क्यों हमारी भी कुटिलता न सुधारोगे भला ।
गर्चे कुब्जा की कुटिलता को सुधारा होगा ॥
माना सरकार की आँखों में अनेकों हैं अधम ।
'बिन्दु' का आँख के कोने में गुज़ारा होगा ॥

पद ३६

यदि नाथ का नाम दयानिध है, तो दया भी करेंगे—
कभी न कभी ।
दुखहारी हरी, दुखिया जन के, दुख क्लेश हरेंगे-
कभी न कभी ॥

जिस अङ्ग की शोभा सुहावनी है जिस श्यामल रंगमें मोहनी है।
उसरूप सुधा से सनेहियों के दृग प्याले भरेंगे—
कभी न कभी ॥

जहाँ गीध निषाद का आदर है, जहाँ व्याध अजामिल का घरहै।
वही वेश बनाके उसी घर में हम जा ठहरेंगे—
कभी न कभी ॥

करुणानिधि नाम सुनाया जिन्हें, कर्णामृत पान कराया जिन्हें।
सरकार अदालत में ये गवाह, सभी गुजरेंगे—
कभी न कभी ॥ ॥

हम द्वार पै आपके आके पड़े, मुद्दत से इसी जिद पर हैं अड़े।
अघ-सिन्धु तरे जो बड़े से बड़े, तो ये 'बिन्दु' तरेंगे—
कभी न कभी ॥

पद ३७

मेरा यार यशुदा कुँवर हो चुका है।
वो दिल हो चुका है जिगर हो चुका है॥
जगत की सभी ख़ूबियाँ मैंने छोड़ी।
जो दिल था इधर, अब उधर हो चुका है॥
ये सच जानिये उसकी बस ऐक नज़र पर।
जो कुछ पास था सब नज़र हो चुका है॥
वो उस मस्त की खुद ख़बर ले रहा है।
जो उसके लिये बेख़बर हो चुका है॥
नहीं आँख का अश्रु जल 'बिन्दु' है यह।
ये उल्फत में लालो गुहर हो चुका है॥

पद ३८

घनश्याम तुझे ढूँढ़ने जायें कहाँ कहाँ।
अपने विरह की याद दिलयें कहाँ कहाँ॥
तेरी नज़र में, ज़ुल्फ में, मुस्क्यान मधुर में।
उलझा है सब में दिल, तो छुड़ायें कहाँ कहाँ॥
चरणों की ख़ाकसारी में खुद ख़ाक बन गये।
अब ख़ाक पै हम ख़ाक रमायें कहाँ कहाँ॥
जिनको तबीब देख के ख़ुद बन गये मरीज़।
ऐसे मरीज़ मर्ज़ दिखायें कहाँ कहाँ॥
दिन रात अश्रु 'बिन्दु' बरसते तो हैं मगर।
सब तन में लगी आग बुझायें कहाँ कहाँ॥

पद ३९

मैं घनश्याम को देखता जारहा हूँ।
उसी की झलक पर खिंचा जारहा हूँ॥
लुटाता है वह, मैं लुटा जारहा हूँ।
मिटाता है वह, मैं मिटा जारहा हूँ॥
ख़बर कुछ नहीं है कहाँ जारहा हूँ।
बुलाता है वह, मैं चला जारहा हूँ॥
मोहब्बत का मैं रंग यूँ लारहा हूँ॥
निगाहों में उसकी बसा जारहा हूँ।
पता प्रेम के सिन्धु का पारहा हूँ॥
कि एक 'बिन्दु' में ही बहा जारहा हूँ।

पद ४०

ये अर्ज़ साँवले सरकार ! हम सुनाते हैं–
कि नैन आपके दीनों पै ज़ुल्म ढाते हैं ॥
न पूछते हैं किसी से, न कुछ बताते हैं ।
जिधर भी दिलको ये पाते हैं घर बनाते हैं ॥
बनाके घर, ये खिलाफ़त का रंग लाते हैं ।
खयाले दिलको भी अपनी तरफ़ मिलाते हैं ॥
खयाले दिल से सभी भेद घर का पाते हैं ।
तो दिल चुराके न जाने किधर को जाते हैं ॥
बयान सब हमारे सच हैं क़सम खाते हैं ।
ये अश्रु 'बिन्दु' की गङ्गा जली उठाते हैं ।

पद ४१

श्याम ! तेरी छटा प्याली जो पिया करते हैं ।
यही अपनी है ग़िजा जिससे जिया करते हैं ॥
नहीं मुरझाते भाव-पुष्प गुलशने दिलके ।
प्रेम के जल से उन्हें सींच दिया करते हैं ॥
रफ़ूगरी की भी तरकीब निकाली है नई ।
तेरी नजरों से जिगर ज़ख्म सिया करते हैं ॥
ग़ज़ब के चाहने वाले भी हैं तेरे मोहन ।
ख़ाक सारी में भी अहसान किया करते हैं ॥
गुथे स्नेह के डोरे में 'बिन्दु' आँसू के ।
इसी माला पै तेरा नाम लिया करते हैं ॥

दादरा ४२

रे मुसाफिर ! भटका है जग जंगल के बीच ।

स्वाँस रतन भर कर इस तन में तूने खज़ाना पटका है,
जग जंगल के बीच ॥
काम क्रोध, अज्ञान लोभ मद, इन चोरों का खटका है,
जग जंगल के बीच ॥
समझ रहा तू गुलशन जिसको, यह माया का लटका है,
जग जंगल के बीच ॥
भोग रोग हिंसक पशु फिरते· काल बाघ का झटका है,
जग जंगल के वीच ॥
विषय 'बिन्दु' मत समझ सुधा तू, घूँट हलाहल घटका है,
जग जंगल के बीच ॥

पद ४३

श्याम सुन्दर ! अब तो हम आशिक़ तुम्हारे बन गये ।
हम तुम्हारे बन गये, और तुम हमारे बन गये ॥
जब ये दिल दुनियाँ का था, दुश्मन हज़ारों के बने ।
जब ये दिल तुमको दिया, हर दिल के प्यारे बन गये ॥
जोग, जप, तप, नेम से कोई बना बिगड़ा करे ।
हम अजामिल गीध गणिका के सहारे बन गये ॥
आँख भर देखेंगे जब तुमको, समझ लेंगे ये हम ।
दिल बना बैकुण्ठ, दृग बैकुण्ठ द्वारे बन गये ॥
विरह-नभ पर, जब तुम्हारा ध्यान चन्द्रोदय हुआ ।
प्रेम के जल 'बिन्दु' जो टपके, सितारे बन गये ॥

पद ४४

ध्यान घनश्याम का दीवाना बना देता है ।
बाग़े दुनियाँ को भी वीराना बना देता है ॥

बिहार साँवले सरकार का, मेरे दिल को।
कभी गोकुल, कभी बरसाना, बना देता है॥
शमए इश्क़ ने तेरे, यूँ दिल किया रोशन।
दीनों दुनियाँ का ये परवाना बना देता है॥
बुत परस्ती का कड़ा शोक़ इसे कहते हैं।
सर जहाँ झुकता है बुतखाना बना देता है॥
प्रेम-प्याले जो पियें भरके वो अपनी जानें।
'बिन्दु' को बिन्दु' ही मस्ताना बना देता है॥

पद ४५

समझो न यह कि आँखें आँसू बहा रही हैं।
घनश्याम पर न जानें क्या-क्या चढ़ा रही हैं॥
नख-छन्द्र पै चरणों के क़तरे जो टपकते हैं।
अनमोल मोतियों की माला पिन्हा रही हैं॥
नँदलाल के हाथों में पहुँची जो अश्क़ माला।
खुद लाल बनके, लालों को भी लजा रहीं हैं॥
चश्मे गुहर झड़ी पर मुसका पड़े जो मोहन।
हीरे की नासा मणियाँ बनती सी जा रही हैं॥
सर्वांग देख कर जो दृग बिन्दु' ढल पड़े हैं।
नौकाये प्रेम की दो, नीलाम लुटा रही हैं॥

पद ४६

जो उस साँवले को सदा ढूँढ़ता है।
उसे एक दिन साँवला ढूँढ़ता है॥
जिसे ढूँढ़ने का अमल पड़ चुका है।

वो इस ढूँढने में मज़ा ढूँढता ॥
अरे दिल जिसे कुल जहाँ ढूँढ़ता है।
वो तुझ में है फिर तू कहाँ ढूँढता है ॥
मिला उसको, जो दिल मिला ढूँढता है।
जुदा उससे है जो जुदा ढूँढता है ॥
जो पूछो पतित 'बिन्दु' क्या ढूँढता है ?
पतित-बन्धु जी का पता ढूँढता है ॥

पद ४७

गुज़ब का दावा है पापियों का, अजीब ज़िद पर सम्हल रहे हैं।
उन्हीं से झगड़े पै तुल रहे हैं, कि जिनने त्रियलोक पल रहे हैं ॥
ये कह रहे हैं, कि श्यामसुन्दर, अधम उधारण बने कहाँ से ?
ख़िताब हमसे ही नाथ लेकर, हमीं से फिर क्यों बदल रहे हैं ?
ग़रीब अधमों के तुम हो प्रेमी, ये बात मुद्दत से सुन रहे थे।
इसी भरोसे पै तुमसे भगवन् झगड़ रहे हैं, मचल रहे हैं ॥
हमारा प्रण है कि पाप कर लें, तुम्हारा प्रण है कि पाप हरलें।
तुम अपने वादे से टल रहे हो, हम अपने वादे पै चल रहे हैं ॥
नहीं है आँखों की अश्रु-धारा, तुम्हारी उल्फ़त का ये असर है।
पड़े थे पापों के दिल में छाले, वो 'बिन्दु' बनकर निकल रहे हैं ॥

पद ४८

उम्मीद है कि उनके हम ख़ाकसार होंगे।
जो प्रेमियों के प्यारे जीवन अधार होंगे ॥
वैसे तो उनके प्रेमी लाखों हज़ार होंगे।
पर हमसे दीन दुर्बल, बस दो ही चार होंगे ॥

गर बार-बार उनकी नज़रों में ख्वार होंगे।
फिर भी गुलाम उनके हम, बार-बार होंगे॥
जीतेंगे हम जो उनके, जीवन निसार होंगे।
हारेंगे हम जो इनसे, तो गले का हार होंगे॥
उनके चरण की नौका पाकर, सवार होंगे।
तो 'बिन्दु' भी किसी दिन भवसिंधु पार होंगे॥

पद ४९

मुझसे अधम अधीन उधारे न जायेंगे।
तो आप दीन-बन्धु पुकारे न जायँगे॥
जो बिक चुके हैं और खरीदा है आपने।
अब वह गुलाम ग़ैर के द्वारे न जायँ गे॥
पृथ्वी के भार आपने सौ बार उतारे।
क्या मेरे पाप भार उतारे न जायँगे॥
खामोश हूँगा मैं भी, अगर आप यह कहदें।
"अब तुझसे पातकी कभी तारे न जायँगे॥
तब तक न चरण आपके सन्तोष पायँगे।
दृग 'बिन्दु' से जब तक ये पखारे न जायँगे॥

पद ५०

भोले भक्तों के भावों को, कैसे भगवान् भुलायेंगे?
यदि नाम पतित-पावन होगा, तो पतितों को अपनायेंगे।
अहसान करेंगे क्या हम पर, यदि हमको दास बनायें गे॥
वे दीना नाथ कहाते हैं अपनी ही लाज बचायेंगे।
वह दिन भी होगा करुणा कर, हम पर करुणा बरसायेंगे॥

हम रोकर अर्ज सुनायेंगे वह हँसकर पास बुलायेंगे।
पतवार नाम की लेंगे हम, भक्ती की वायु चलायेंगे॥
इस युक्ती से काया नौका, भवसागर पार लगायेंगे।
दृग से जल 'बिन्दु' बहायेंगे, स्वामी के पाँव धुलायेंगे।
यह चरणों की रज धो धोकर एक दिन गङ्गा बनजायेंगे॥

पद ५१

लड़गईं लड़गईं लड़गईं हो, अँखियाँ लड़गईं श्यामसुन्दर से।
बहुत जगत भरमाईं आँखें, राम शरण तब आईं आँखें॥
मुख-मंडल पर अड़गईं हो, अँखियाँ लड़गईं श्यामसुन्दर से।
दुनियां की रंगत क्या देखें, साधारण सूरत क्या देखें?
राघव छवि में गड़गईं हो, अँखियाँ लड़गईं श्यामसुन्दर से॥
पीकर भक्ति नशे की प्याली, छाय गई अँखियन में लाली।
नेह-पंथ में बढ़गईं हो, अँखियाँ लड़गईं श्यामसुन्दर से॥
पुतली पुष्प कली बन आईं, प्रेम 'बिन्दु' से ख़ूब सिंचाईं।
श्यामाचरण पर चढ़गईं हो, अँखियाँ लड़गईं श्यामसुन्दर से॥

पद ५२

मन! ग्रहण करो अन्तिम उपदेश।
यह देश छोड़कर अब तो जाना है निज देश॥
अब तलक धोके में जो होना था सब कुछ होगया।
पाप के बाज़ार में अपना खज़ाना खो गया॥
किन्तु अब माया तथा मद मोह में मत फूलना।
रात्रि दिन श्रीकृष्ण राधा के चरण मत भूलना॥
श्रीकृष्ण के भजन से कट जाते हैं दुख क्लेश।

प्रार्थना ईश्वर से है सुख शान्तिमय हों आप सब।
कृष्ण करुणाकर! हरण करलें हृदय के पाप सब॥
'बिन्दु' के बचनों का केवल आखिरी यह सार है।
श्याम के सुमिरन बिना यह जिन्दगी बेकार है॥
हम सबका है सहारा, प्यारा ब्रज का नरेश॥

पद ५३

भवसागर का रत्न वही है जिसमें कुछ निर्मलता है।
धन्य पुरुष है वही कि जिसका नाम जगत् में चलता है॥
रामचन्द्र श्रीराघव ने इस जग में धर्म प्रकाश किया।
कर्म बीरता दिखलाकर, खल रावण बंश बिनाश किया।
केवट भील, और कपि-कुल को, प्रेम,प्रथा से दास किया॥
इसीलिये श्रीराम नाम पर, भारत ने विश्वाश किया॥
इन नामों से नर-जीवन का, बृक्ष फूलता फलता है।
धन्य पुरुष है वही कि जिसका नाम जगत में चलता है॥
नाम हुआ है ब्रज में कृष्ण कन्हैया रूप निराले का।
कर्म किया बीरों का जिसने, बेश बनाया ग्वाले का॥
चूर्ण किया मद कालिन्दी में, काली विषधर काले का।
अब तक भारत में घर-घर यश छाया बंशी वाले का॥
मुख से कृष्ण नाम कहते ही, मन का पाप निकलता है।
धन्य पुरुष है वही कि जिसका नाम जगत में चलता है॥
रघु दिलीप शिवि से राजा थे, याचकता हरने वाले।
सत्य बचन पर हरिश्चन्द्र, दशरथ से थे मरने वाले॥
हनूमान श्रीभरत, विभीषण, भक्ति-भाव भरने वाले॥
इन लोगों के नाम हुय, अदर्श अमर करने वाले।
ऐसे ही सत्कर्मो से कुछ भूमि भार भी टलता है॥

धन्य पुरुष है वही कि जिसका नाम जगत में चलता है ॥
नर की शोभा और बड़ाई नाम से होती है ।
बदनामों के वर्णन में कवियों की कविता रोती है ॥
काया क्या है ? सीप, 'बिन्दु' सत्कर्म, सीप का मोती है ।
ग्रन्थ सूत्र में इन्हीं मोतियों को, लेखनी पिरोती है ॥
जिसके श्रवण-मात्र से ही जीवन का मार्ग सम्हलता है ।
धन्य पुरुष है वही कि जिसका नाम जगत में चलता है ॥

पद ५४

अब मन ! भजो श्रीरघुपति राम ।
पल छिन सुमिरन कर तरो जगत जलधि को,
भरमत फिरत काहे माया के फन्दन में,
तजो कपट छल काम ॥ अब मन० ॥
सदा कहो सुख कर दुख हर धनुधर श्रीहरी,
अमित अधम जिन तारे, भक्त रखवारे, दीन के सहारे,
'बिन्दु' बिमल गुण ग्राम ॥ अब मन० ॥

पद ५५

मेरे राम ! मुझे अपना लेना, दुखी दीन को दास बना लेना ॥
ठोकरें खाईं बहुत झूठे जगत के प्यार पर ।
इसलिये आये हैं सीतापति तुम्हारे द्वार पर ॥
अब मुझे तारो न तारो यह तुम्हारे हाथ है ।
गर न तारोगे तो बदनामी तुम्हारी नाथ है ॥
जरा नामकी लाज बचा लेना । मेरे राम मुझे० ॥

नीच गणिका, गण, अजा मल की खबर ली आपने
भक्ति द्वारा भीलनी भी मुक्त करली आपने ॥
भक्त कितने आप पर जीवन निछावर कर गये।
नाम लेकर आपका पापी हजारों तर गये ॥
उन्हीं अधमों के साथ मिला लेना। मेरे राम मुझे० ॥
काम क्रोधादिक लुटेरों का हृदय में वास है।
पातकों का बोझ है अधमों की सङ्गति पास है ॥
पवन माया की चली है, भ्रम भँवर रहता है साथ।
बीच भवसागर में बेड़ा, 'बिन्दु' का बहता है नाथ ॥
मुझे धार के पार लगा लेना। मेरे राम मुझे० ॥

[चौथा भाग]

पद ५६

भक्त जन मुदित मन हृदय सुमिरन करो हर हर महादेव, हर० ।
जननि गिरिजा सहित ध्यान शिव का धरो, हर हर महादेव, हर०
योग योगेश सर्वेश, आरत्ति-हरण,
मंगल-करण, शुभग जिनके युगल-चरण।
अशरण शरण, प्रणत पाल शङ्कर प्रयो,
हर २ महादेव हर २ महादेव ॥
त्रिपुर-नाशक प्रकाशक, सुखद साज के,
त्रासक असुर नीच मति खल समाज के।
मदन-मद के विनाशक सदा शिव कहो,
हर २ महादेव हर २ महादेव ॥

भूताधिपति, राम पद भगति दातार,
शुभ गति सुमति दान पूरण कृपा गार।
संसार-सिन्धु तारक महेश्वर, विभो !
हर २ महादेव हर २ महादेव ॥
जयति शुभ नाम सुख धाम अभिराम हर,
शोभित लालम, छबि चन्द्र शिर गंगा धर।
स्वीकार 'बिन्दु' सेवक का प्रणाम हो,
हर २ महादेव हर २ महादेव ॥

पद ५७

मन मूरख ? बोल, राधा कृष्ण हरे।
राधा कृष्ण हरे, गोपी कृष्ण हरे ॥
अधम गज, गीध, गणिका, जिसने हँस हँस कर उधारे हैं।
अजामिल से पतित भी, जिस पतित पावन ने तारे हैं॥
उसी का नाम अपने, नीच दासों की खबर लेगा।
बँधेगा तार सुमिरन का, तो एक दिन तार भी देगा ॥
मन मूरख ? बोल राधा कृष्ण हरे।
नहीं कलयुग, ये कर युग है, यहाँ करणी कमाले तू ॥
वजन पापों का सर पर है, उसे कुछ तो घटाले तू ॥
जो हरि जन बन तो एसा बन, कि हरि सुमिरन की हद करदे।
भजन के जोर से, यमराज का खाता भी रद करदे।
मन मूरख ? बोल राधा कृष्ण हरे।
नहीं उनकी नजर पड़ती है, हरि सुमिरन की राहों पर।
पड़ा परदा है, मोती 'बिन्दु' का जिनकी निगाहों पर ॥
दिखाई उनको क्या भगवान दें, जो दिल के गन्दे हैं।

नजर आता नहीं उनको कि जो आँखों के अन्धे हैं ॥
मन मूरख ? बोल राधा कृष्ण हरे ।

पद ५८

मेरी आँखों में वहीं दिलदार है,
जिसपे शैदा ये सब संसार है ।
जो अयोध्या में आदर्शधारी बना ।
और बृजमें जो लीला बिहारी बना ॥
ऐसेनटवर पै सब कुछ निसार है । हाँ मेरी० ॥
कभी झाँकी दिखाई धनुष बान से ।
कभी मुरली बजाई मुधुर तान से ॥
हर जगह पर वो खुद आशकार है । हाँ मेरी० ॥
कभी बलि के यहाँ बिप्र दुर्बल बना ।
द्रौपदी के लिये वस्त्र बादल बना ॥
कभी खम्भे से लेता अवतार है । हाँ मेरी० ॥
कभी कञ्चन की लङ्का लुटाता फिरे ।
कभी गोकुल में माखन चुराता फिरे ॥
हर चमन में उसी की बहार है । हाँ मेरी० ॥
जो कि बाराह, वामन परशुराम है ।
जोकि घनश्याम है और जो राम है ॥
दीन द्रग 'बिन्दु' से जिसको प्यार है । हाँ मेरी० ॥

पद ५६

ओ पर्दा नशीं तेरी, हर शक्ल सही में हूँ ।
है झूँठ तो बतलादे, किस शै में नहीं में हूँ ॥

रवि चन्द्र, सितारों में, जल, थल में पहाड़ों में।
जलवा है जहाँ तेरा, मौजूद वही मैं हूँ ॥
सृष्टी के दो भागों में दोनों हैं बराबर ही।
आज़ाद कहीं तू है, आबाद कही मैं हूँ ॥
इस बाग़े जहाँ से ही, मिलता है पता मुझको।
हर जड़ में यही तू है, हर गुल में यही मैं हूँ ॥
यह 'बिन्दु' भी मिलता है, जब नूर समन्दर से।
फिर कौन जुदा किससे, जो तू है वही मैं हूँ ॥
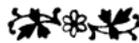
पद ६०

तरीक़ा अब निराला अपनी सेवा का दिखयेंगे।
युगल सरकार की तस्वीर आँखों में खिचायेंगे ॥
जमाकर लालसा गद्दी, लगाकर भाव का तकिया।
जगाकर ज्योति जपकी मनके मन्दिर में बिठायेंगे ॥
मनोहर छन्द तागे में, सुमन शब्दों के गूंथेंगे।
बसा कर इत्र, रसका, काव्य की माला पिन्हायेंगे ॥
जलाकर आरती अनुराग में, कर्पूर कर्मों का।
पुजरी प्रेम के द्वारा, उचित पूजन करायेंगे ॥
गिरा कर 'बिन्दु' आँखों से बहायेंगे नदी गंगा।
तुम्हे नहला के इसमें, हम भी फिर ग़ोते लगायेंगे ॥

पद ६१

दास घुरनाथ का नन्द सुत का सखा,
कुछ इधर भी रहा कुछ उधर भी रहा।
सुख मिला श्री अवध और बृजबास का,
कुछ इधर भी रहा कुछ उधर भी रहा ॥

मैथिली ने कभी मोद मोदक दिया,
राधिका ने कभी गोद में ले लिया।
मातृ सत्कार में मग्न हो कर सदा,
कुछ इधर भी रहा कुछ उधर भी रहा ॥
ख़ूब ली है प्रसादी अवध राज की,
ख़ूब जूठन मिली यार बृजराज की।
योग मोहन छका, दूध माखन चखा,
कुछ इधर भी रहा कुछ उधर भी रहा ॥
उस तरफ द्वार दरवान हूँ राज का,
इस तरफ दोस्त हूँ दानि शिरताज का।
घर रखाता हुआ ज़र लुटाता हुआ,
कुछ इधर भी रहा कुछ उधर भी रहा ॥
कोई नर या इधर या उधर ही रहा,
कोई नर, ना इधर ना उधर ही रहा।
'बिन्दु' दोनों तरफ ले रहा है मज़ा,
कुछ इधर भी रहा कुछ उधर भी रहा ॥

पद ६२

करना है कुछ तुमको विहार आँखों से,
देखते रहो बृज की बहार आँखों से।
थे खड़े कदम के तले नन्द के लाला—
था बना अनोखा नटवर बेश निराला ॥
जिसने भी कुछ पी लिया रूप मधु प्याला,
पल भर में ही बन गया मस्त मतवाला।
दिल बोल उठा यह बार बार आँखों से,
देखते रहो बृज की बहार आँखों से।

मैंने चाहा मोहन को गले लगाना,
मोहन मुझ से कुछ करने लगे बहाना।
मैंने ये कहा साँवले भाग मत जाना,
तुमको है मन-मन्दिर में आज बिठाना॥
हँस कर बोले घनश्याम थार आँखों से।
देखते रहो बृज की बहार आँखों से।
इस काया को ही बृज की भूमि बनालो,
इस मानस को ही वृन्दावन ठहरालो॥
भावना पुञ्ज में सेवाकुञ्ज सजालो,
राधिका भक्ति, घनश्याम प्रेम, पधरालो।
फिर 'बिन्दु' बहादो यमुन धार आँखों से,
देखते रहो बृज की बहार आँखों से॥

पद ६३

हमारी बार तुम निकले जो मन मोहन सनम झूँठे।
तो सरदारों के सुन्दर नाम सब कर देंगे हम झूँठे॥
जो क़दमों ने तुम्हारे तरु, शिला, केवट, उधारे थे।
तो अब कलकालमें करते हो क्यों साबित क़दम झूँठे॥
पतित से पतितपावन का मिलो क्या खूब जोड़ा है।
न तुम सच्चों में कम सच्चे, न हम झूँठों में कमझूँठे॥
पढ़ा है हमने ग्रन्थों में कि तुम अधमों के प्रेमी हो।
बता दो ग्रन्थ झूँठे हैं, कि तुम झूँठे कि हम झूँठे।
जो करुणा सिन्धु करदो 'बिन्दु' पर करुणा नज़र कुछ भी।
तो फिर झगड़ा ही मिट जाये, न तुम झूँठे न हम झूँठे॥

पद ६४

हाज़िर हैं सरकार जनों के लिये !

निराकार निर्गुण होकर भी, बन जाते सरकार, जनों के लिये
दुर्योधन के महल त्याग कर, गये विदुर के द्वार, जनों के लिये ।
निज साकेत बिहार छोड़ कर, प्रगटे काराकार जनों के लिये ॥
राज्य त्याग कर बन२ भटके, जगपति जगदाधार, जनों के लिये॥
नरसी हुन्डी हेतु बन गये साँवल साहूकार, जनों के लिये ।
अश्रु 'बिन्दु' माला को प्रभु ने, कर लिया मुक्ताहार, जनों के लिये॥

पद ६५

दिखा देते हो रुख जब सांवले सरकार थोड़ा सा ।
तो भर लेती हैं आँखें शर्बते दीदार थोड़ा सा ॥
ये खिल जाते हैं जब आँसू के क़तरे पुष्प बन बन कर ।
खिला देते हैं दिल में प्रेम का गुलज़ार थोड़ा सा ॥
ज़रा मस्ती के झोंके में हिलीं आँखें, तो हिलते ही ।
छलक पड़ता है प्यालों से तुम्हारा प्यारा थोड़ा सा ॥
चले बिकने ये अश्कों के गुहर मुझसे ये कह कह कर ।
कि अब देखेंगे करुणागार का बाज़ार थोड़ा सा ॥
गिरे दृग 'बिन्दु' पृथ्वी पर तो बनकर हर्फ़ यूँ बोले ।
पतित पावन से लिखवाते हैं, हम इक़रार थोड़ा सा ॥

पद ६६

छोड़ बैठा है सारा ज़माना मुझे, नाथ अब आपही दो ठिकाना मुझे
पातकों की घटा घोर घमसान है ।
और जगसिन्धु का बेग बलवान है ॥

काम, मद, क्रोध, माया का तूफ़ान है।
देह जलयान का जीर्ण सामान है॥
चाहते हैं ये मिलकर डुबाना मुझे नाथ अब आप ही दो० ॥
क्या तुम्हें दीन गज ने पुकारा नहीं ॥
क्या दुखी गीध था तुमको प्यारा नहीं।
क्या यवन पिंगला को उधारा नहीं॥
क्या अजामिल अधम तुमने तारा नहीं॥
फिर बताते हो क्योंकर बहाना मुझे। नाथ अब आप ही दो० ॥
किसके कदमों प नीचा ये सर मैं करूँ।
आह को किसके दिल पर असर मैं करूँ।
किसका घर है कि जिस घरमें घर मैं करूँ
अश्रु के 'बिन्दु' किसकी नजर में करूँ।
आख़िरी है ये विनती सुनाना मुझे। नाथ अब आप ही दो० ॥

पद ६७

दरश दिखला दो राजिव नैन।
पड़त नहिं अब एक घड़ी पल चैन॥
लगी है जब से लगन दिल ही और हो बैठा।
न भूख प्यास है जीने से हाथ धो बैठा॥
जो एक बार रूप माधुरी को पी जाऊँ।
तो इसमें शक नहीं मरता हुआ भी जी जाऊँ॥
दहत तन विरहानल दिन रैन। दरश दिखला दो० ॥
जो प्राण जाना ही चाहें तो इस तरह जायें।
कि मेरे सामने करुणा निधान आजायें॥
कहूँ मैं उनसे कि सर्वस्व दे चुका तुमको।

यो यह कहें कि "शरण अपनी ले चुका तुमको" ॥
सुनें ये रस 'बिन्दु' भरे मृदु बैन ॥ दरश दिखला दो० ॥

पद ६८

अब तो सुन लो पुकार, बृज के बसैया कन्हैया मेरे ।
हज़ारों अर्जियाँ दरख्वास्त पेश करदी हैं ।
उन्हीं में पापों की मिसिलें भी साथ धरदीं हैं ॥
हुज़ूर जल्द मुकदमें का तस्फ़ेहा कर दो ।
तभी है मुन्सफ़ी जब दास को रेहा करदो ॥
हो सदा जै जै कार, करुणा करैया कन्हैया मेरे ॥
मैं जगसमुद्र में पहिले ही से डूबा हूँ ! मगर ।
बहा रहे हैं ये दृग 'बिन्दु' दूसरा सागर ॥
भरोसा अब तो है तरने का उन्हीं के बल पर ।
कि जिनके नाम ने तैरा दिये पत्थर जल पर ॥
करदो पलभर में पार, जीवन की नइया खेवैय्या मेरे ॥

पद ६९

अफ़सोस मूढ़ मन तू, मुद्दत से सो रहा है ।
सोचा न यह कि घर में अन्धेर हो रहा है ॥
चौरासी लाख मंज़िल, तय करके मुशकिलों से ।
जिस घर को तूने ढूँढा, उस घर को खोरहा है ॥
घट में है ज्ञान गंगा उसमें न मारा ग़ोता ।
तृष्णा के गन्दे जल में, इस तन को धोरहा है ॥
अनमोल स्वास तेरी, पापों में जा रही है ।
रत्नों को छोड़ कङ्कड़ और काँच ढो रहा है ॥
संसार सिंधु से तू क्या खाक पर होगा ।
विषयों के 'बिन्दु' में जब क़िश्ती डुबो रहा है ॥

पद ७०

हमारे मन हरि सुमिरन धन भावे।
मन में बन्द करैं तो उसको कोई देख न पावै ॥
बाहर खोल धरें तो उसको कोई नहीं चुरावै।
हमारे मन० ।
घटने का तो नाम न लावै हरदम बढ़ता जावै ॥
भाई बेटा संगी साथी कोई नहीं बटावै ॥
हमारे मन० ॥
पानी चाहे जैसा बरसै उसको नहीं गलावै ।
अग्नी चाहे जैसी सुलगे उसको नहीं जलवै ॥
हमारे मन० ॥
आँधी नहीं उड़ावै उसको धरती नहीं समावै ।
ऐसा आत्म 'बिन्दु' धन पाकर शाहंशाह कहावै
हमारे मन० ॥

पद ७१

रे मन ! ये दो दिन का मेला रहेगा।
क़ायम न जग का झमेला रहेगा ॥
किस काम का ऊँचा जो महल तू बनायेगा।
किस काम का, लाखों का जो तोड़ा कमायेगा ॥
रथ हाथियों का झुण्ड भी किस काम आयेगा।
तू जैसा यहाँ आया था, वैसा ही जायेगा ॥
तेरे सफ़र में सवारी की ख़ातिर, कंधों पै ठठरी का ठेला रहेगा।
रे मन ये दो दिन का मेला रहेगा।
कहता है ये ? दौलत कभी आयेगी मेरे काम ।

पर यह तो बता ? धन हुआ, किसका भला गुलाम ॥
समझा गये उपदेश हरिश्चन्द्र, कृष्ण, राम ।
दौलत तो नहीं रहता है, रहता है सिर्फ नाम ॥
छूटेगो सम्पति यहाँ की यहीं पर तेरा कमर में न धेला रहेगा ।
रे मन ये दो दिन का मेला रहेगा ॥
साथी हैं मित्र-गंगा के जल 'बिन्दु' पान तक ।
अर्धांगिनी बढ़ेगी, तो केवल मकान तक ॥
परिवार के सब लोग, चलेंगे मसान तक ।
बेटा भी हक़ निवाहेगा, तो अग्नि दान तक ॥
इससे तो आगे भजना ही है साथी, हरि के भजन बिन अकेला रहेगा
रे मन दो दिन का मेला रहेगा ॥

पद ७२

मोहन प्रेम विना नहिं मिलता, चाहे करले कोटि उपाय ।
मिलै न जमुना सरस्वती में, मिलै न गंग नहाय ।
प्रेम सरोवर में जब डूबे, प्रभु की झलक लखाय ॥ मोहन०॥
मिलै न पर्वत में, निर्जन में, मिलै न बन भरमाय ।
प्रेम बाग़ घूमें तो हरि को, घट में ले पधराय ॥ मोहन० ॥
मिलै न पण्डित को ज्ञानी को मिलै न ध्यान लगाय ।
ढाई अक्षर प्रेम पढ़े तो, नटवर नयन समाय ॥ मोहन० ॥
मिलै न मन्दिर में मूरति में, मिलै न अलख जगाय ।
प्रेम 'बिन्दु' दृग से टपकें तो, तुरत प्रगट हो जाय ॥मोहन०॥

पद ७३

जग में सुन्दर हैं दो नाम । चाहे कृष्ण कहो या राम ॥
एक हृदय में प्रेम बढ़ावे, एक पाप के ताप हटावे,

दोनों सुख के सागर हैं, दोनों हैं पूरण काम।
चाहे कृष्ण कहो या राम ॥
माखन बृज में एक चुरावे, एक बेर शवरी घर खावे,
प्रेम भाव से भरे अनाखे, दोनों के हैं काम।
चाहे कृष्ण कहो या राम ॥
एक कंस पापी संहारै, एक दुष्ट रावण को मारै।
दोनो हैं अधीन दुख हर्त्ता, दोनों बल के धाम ॥
चाहे कृष्ण कहो या राम ॥
एक राधिका के संग राजै, एक जानकी सँग बिराजै,
चहे सीता राम कहो या बालो रधेश्याम।
चाहे कृष्ण कहो या राम ॥
दोनों हैं घट २ के बासी, दोनों हैं आनन्द प्रकाशी,
'बिन्दु' सदा गोविंद भजन से, मिलता है बिश्राम।
चहे कृष्ण कहो या राम ॥

[पांचवां भाग]

पद ७४

अहो उमापति अधीन भक्त की व्यथा हरो।
दयालु विश्वनाथ दीन दास पै दया करो ॥
तुम्ही अशक्त के लिये समर्थ हो उदार हो।
तुम्हीं अनादि काल से अनन्त हो अपार हो ॥
तुम्हीं अथाह सृष्टि सिन्धु मध्य कर्ण धार हो।
तुम्हीं करो सहाय तो शरीर नाव पार हो ॥

प्रभो अधी मलीन के न पाप चित्त में धरो।
दयालु विश्वनाथ दीन दास पै दया करो॥
अनेक पातकी सदा अशुद्ध कर्म जो किये।
परन्तु एक बार शम्भु नाम प्रेम से लिये॥
गये समस्त शम्भु धाम ध्यान शम्भु में दिये।
अनाथ के न नीच कर्म नाथ लेख में लिये॥
अतेव स्वामि 'बिन्दु' बुद्धि राम भक्ति से भरो।
दयलु विश्वनाथ दीन दास पै दया करो॥

पद ७५

अजब है यह दुनिया बाज़ार।
जीव जहाँ पर ख़रीदार है, ईश्वर साहूकार॥ अजब०
कर्म तराजू, रैन दिवस दो पलड़े तोलें भार।
पाप पुण्य के सौदे से ही होता है व्यापार॥ अजब०
बने दलाल फिरा करते हैं, कामादिक बटमार।
किन्तु बचाते हैं इनसे, ज्ञानादिक पहरेदार॥
गिनकर थैली स्वाँस रत्न की, सम्हलादी सौ बार।
कुछ तो माल खरीदा नक़दी, कुछ कर लिया उधार॥ अजब०
भर कर जीवन नाव चले, आशा सरिता के पार।
कहीं 'बिन्दु' भर छिद्र हुआ तो, डूब गए मँझधार॥ अजब०

पद ७६

मैं घनश्याम का बावला हो रहा हूँ।
कभी हँस रहा हूँ कभी रो रहा हूँ॥
जो आँखों से हरदम निकलते हैं मोती।
ये तोहफ़ा उन्हीं के लिये ढो रहा हूँ॥

न रह जाय कालिख लगी कुछ इसी से ।
बिरह जल में मलमल के दिल धो रहा हूँ ॥
नहीं अश्रु के 'बिन्दु' गिरते जमीं पर ।
ये कुछ प्रेम के बीज हैं बो रहा हूँ ॥

दादरा ७७

प्रभो अपने दरबार मे अब न टालो,
गुलामी का इक़रार मुझसे लिखालो ॥
दोहा—दीनानाथ अनाथ का, भला मिला संयोग ।
अब यदि तारोगे नहीं हँसी करेंगे लोग ॥
है बेहतर कि दुनियाँ की बदनामियों से ।
बचो आप खुद और मुझको बचालो ॥
दोहा—पशु निषाद खगभीलनी, हीन जा न कुल नाम ।
बिना योग जप तप किये, गये तुम्हारे धाम ।
ये जिस प्रेम के सिन्धु में जा मिले हैं ।
उसी सिन्धु में 'बिन्दु' को भी मिलालो ॥

पद ७८

उल्फ़त नशे का जिस दम, सच्चा सुरूर होगा ।
परमात्मा उसी दम, ज़ाहिर ज़रूर होगा ॥
अधमों की अधमता पर खुश हों अधम उधारण ।
फिर क्यों न अधमता पर, हमको ग़ुरूर होगा ॥
हर शै में उसकी सूरत उस दिन झलक पड़ेगी ।
जिस दिन दुई का परदा इस दिल से दूर होगा ॥
लग जायगी जो उसके क़दमों की एक ठोकर ।
पापों का सख्त पुतला पल भर में चूर होगा ॥

गर अश्रु 'बिन्दु' यूँ हीं बरसेंगे तो बिलाशक।
बन्दे के सामने खुद हाजिर हुजूर होगा॥

पद ७९

घनश्याम तुझसे यह अर्ज है, कुछ ऐसा मेरा सुधार हो।
इस तन में तेरा तलाश हो, इस मन में तेरा ही प्यार हो॥
तेरी चाह में ही चढ़ा रहूं, तेरे द्वार पर ही पड़ा रहूं।
क़दमों पै तेरे अड़ा रहूं, चाहे कष्ट मुझपै हज़ार हो॥
तेरी याद दिल में किया करूं, तुझे धन्यवाद दिया करूं।
तेरा नेक नाम लिया करूं, ये रक़म न मुझपै उधार हो॥
मेरे ध्यान में तू फँसा रहे, रग-रग में तूही बसा रहे।
अनुराग का वो नशा रहे, दिन रात का न शुमार हो॥
चले प्राण तन से जो ऊब कर, अहसान ये मुझपै तू खूब कर।
तेरे प्रेम सिन्धु में डूब कर, भवसिंधु 'बिन्दु' भी पार हो॥

पद ८०

रे मन मूरख कब तक, जग में जीवन व्यर्थ बिताएगा।
राम नाम नहिं गाएगा, तो अन्त समय पछताएगा॥
जिस जग में तू आया है, यह एक मुसाफ़िर खाना है।
सिर्फ़ रात भर रुक कर इसमें, सुबह सफ़र कर जाना है॥
लेकिन यह भी याद रहे श्वासों का पास खज़ाना है।
जिसे लूटने को कामादिक चारों ने प्रण ठाना है॥
माल लुटा बैठा तो घर जाकर क्या मुँह दिखलाएगा।
राम नाम नहीं गाएगा तो अन्त समय पछताएगा॥
शुद्ध न की, वासना हृदय की बुद्धि नहीं निर्मल की है।
झूँठी दुनियादारी से, क्या ? आश मोक्ष के फल की है॥

अब भी कर जो करना हो, क्यूँ देर आज या कलकी है।
तुझको क्या है ख़बर जिन्दगी, तेरी कितने पल की है॥
ज़म के दूत घेर जब लेंगे, तब क्या धर्म कमाएगा।
राम नाम नहिं गाएगा, तो अन्त समय पछताएगा॥
पहुँच गुरू के पास ज्ञान के दीपक का उजियाला ले।
कंठी पहन कंठ में जप की, कर सुमिरन की माला ले॥
खाने को दिलदार रूप का रसमय मधुर नेवाला ले।
पीने को प्रीतम प्यारे के प्रेम तत्व का प्याला ले॥
यह न किया! तो आँखो से आँसू के 'बिन्दु' बहाएगा।
राम नाम नहिं गाएगा तो अन्त समय पछताएगा॥

पद ८१

न कियो जिसने भजन राम का वो नर कैसा।
बसा न जिसमें सुघर श्याम तो वो घर कैसा॥
जो व्यर्थ नाच तमाशों में सर्फ़ होता रहा।
न लुटा सन्तों के सत्कार में वो ज़र कैसा॥
ये जग के लोग तो खुश होके वाहवा करदें।
मगर न खुश हो जगत नाथ वो हुनर कैसा॥
ग़रज के वास्ते लाखों के दर पै झुकता रहे।
न दीन बन्धु के दर पर झुके वो सर कैसा॥
असर हज़ार दिलों में ये अश्रु 'बिन्दु' करें।
न हो दयालु के दिल पर तो वो असर कैसा॥

पद ८२

ख़बर क्यों न लेंगे मेरी नन्दकुमार।
नन्दकुमार प्यारे कान्हा दिलदार॥ ख़बर०

पतित बन्धु अब मुझसे बढ़कर पतित और क्या पाएंगे।
तारेंगे फिर भी न मुझे ता कर मलकर पछताएंगे॥
कीर्ति गँवाएंगे अपनी, दुनियां में नाम हँसाएंगे।
अधमों को अधमोंद्धारण क्या मुख अपना दिखलाएंगे॥
खबर क्यों न लेंगे मेरी नन्दकुमार।
शबरी, गीध, निषाद, निशाचर, जो जो हरि दरबार गए।
यह सब छोटे पापी थे जिनका पल भर में तार गए॥
मुझसा महा अधम देखा तो भूल सभी इक़रार गए।
अब या तो तारें मुझको, या कहदें हम हार गए॥
खबर क्यों न लेंगे मेरी नन्दकुमार॥
दर पर दास बैठकर सच्ची श्रद्धा पर तुल जायगा।
सरल हृदय करुणा निधान का आहों से घुल जायेगा॥
अश्रु 'बिन्दु' द्वारा बह बह कर मन का मैल धुल जायेगा॥
तभी पतित पावन के घर का दरवाज़ा खुल जायेगा॥
खबर क्यों न लेंगे मेरी नन्दकुमार॥

पद ८३

क्यूँ ये कहते हो घनश्याम आते नहीं।
सच्चे दिल से उन्हें तुम बुलाते नहीं॥
क्यूँ ये कहते हो कुछ भोग खाते नहीं।
भीलनी भाव से तुम खिलाते नहीं॥
क्यूँ ये कहते हो गीता सुनाते नहीं।
पार्थ सी धारणा तुम दिखाते नहीं॥
क्यूँ ये कहते हो लज्जा बचाते नहीं।
द्रोपदी सी विनय तुम सुनाते नहीं॥

क्यूँ ये कहते हो नर तन बनाते नहीं।
प्रेम के 'बिन्दु' दृग से गिराते नहीं॥

पद ८४

तूने किया न हरि का ध्यान, जग में जन्म व्यर्थ ही बीता।
पाया सुख सम्पति सामान, बजते डंके और निशान॥
लेकिन सब है धूल समान, यदि तू रटे न रघुवर सीता।
करता है वेदान्त बखान, बनता है शिक्षक विद्वान॥
पर वह झूठा है सब ज्ञान, जब तक काम क्रोध नहिं जीता।
रचता है जग जाल विधान, गृह में खिचती कलह कमान॥
फिर भी रखता यह अभिमान, पढ़ता हूँ रामायण गीता।
ठानै जप तप मख हठ ठान, जो है साधन कठिन महान्।
जिससे सहज मिलै भगवान्, ऐसा प्रेम 'बिन्दु' नहिं पीता॥

पद ८५

कृष्ण प्यारे को नहीं तूने जाना रे।
रहा दुनियाँ में हरदम दिवाना रे॥
झूँठ कपट व्यवहार में किया सबेरा शाम।
एक बार भी प्रेम से लिया न हर का नाम॥
इसमें करता है लाखों बहाना रे। कृष्ण०॥
धन दौलत से एक दिन खाली होगा हाथ।
अन्त समय भगवान् का भजन चलेगा साथ॥
भरले भक्ती का दिल में खज़ाना रे। कृष्ण०।
जो करना है जल्द कर क्यों बैठा है मौन।
पल-पल में प्रलय है कल की जानै कौन॥

व्यर्थ अब तो न जीवन गँवाना रे ॥ कृष्ण० ॥
कहीं न उसको ढूँढ तू करले यह विश्वास ।
प्रेम 'बिन्दु' को देखकर आता है प्रभु पास ॥
इससे बढ़कर है क्या समझाना रे ॥ कृष्ण० ॥

पद ८६

प्रबल प्रेम के पाले पड़कर प्रभु को नियम बदलते देखा ।
उनका मान टले, टल जाये, जनका मान न टलते देखा ॥
जिनकी केवल कृपा दृष्टि से, सकल सृष्टि को पलते देखा ।
उनको गोकुल के गोरस पर सौ सौ बार मचलते देखा ॥
जिनके चरण कमल कमला के करतल से न निकलते देखा ।
उनको बृज करील कुञ्जों में कण्टक पथ पर चलते देखा ॥
जिनका ध्यान, विरंचिशंभु, सनकादिक से न सम्हलते देखा ।
उनको ग्वाल सखा मण्डल में लेकर गेंद उछलते देखा ॥
जिनकी बंक भृकुटि के भय से सागर सप्र उबलते देखा ।
उनको ही यशुदा के भयसे अश्रु 'बिन्दु' दृग ढलते देखा ॥

पद ८७

घनश्याम जिसे तेरा जल्वा नजर आता है ।
उससे ये कोई पूँछे क्या क्या नजर आता है ॥
हरजा तू ही रोशन है हरशै में तेरी लौ है ।
हर दिल तेरी सूरत पर शैदा नजर आता है ॥
हैरान हैं नजरें भी अब गैर को क्या देखें ।
नजरों में भी तेरा ही नक़्शा नजर आता है ॥

बतलायें किसे क्या हम ? क्या क़द्र है आँसू की ।
एक 'बिन्दु' भी उल्फत का दर्या नजर आता है ॥

पद ८८

पाप लाखों के जो तू हर गया बंशी वाले ॥
तो मेरे पाप से क्यों डर गया बंशी वाले ।
डूबने वाला हूँ भवसिंधु में कुछ देर नहीं ॥
क्योंकि पापों का धड़ा भर गया बंशी वाले ।
नाम पर तेरे न हो कैसे भरोसा मुझको ॥
जब अजामिल सा अधम तर गया बन्शी वाले ।
इसलिये भेंट में देता हूँ अश्रु 'बिन्दु' तुझे ॥
क़द्र इनकी तू कभी कर गया बन्शी वाले ॥

पद ८९

जिसपर ये दिल फ़िदा है दिलवर वो है निराला ।
हर दिल अज़ीज़ भी है, हर दिलका है उजाला ॥
क्या है वो, क्या नही है, झगड़ा ये दूर हो जब ।
होता है तब वो ज़ाहिर, परदे में छिपने वाला ॥
खम्भे से, मूर्ती से, जल सिन्धु से, ज़मीं से ।
पलभर में निकल आया, जिसने जहाँ निकाला ॥
ज़र्रों में पहाड़ों में, क़तरों में, बादलों में ।
अदना है 'बिन्दु' से भी, है सिंधु से भी आला ॥

पद ९०

नक़्शा है दिल पै तस्वीर घनश्याम की ।
और ज़ुबाँ पर है तक़रीर घनश्याम की ॥

जिसको छूकर शिला नारि भी तर गई ।
ढूँढता हूँ वो अक्सीर घनश्याम की ॥
मस्त गजराज मन इसलिए बँध गया ।
पड़गई ज़ुल्फ़ जंजीर घनश्याम की ॥
इस क़दर मेरी आँखें मिलीं श्याम से ।
आगई ईनमें तासीर घनश्याम की ॥
'बिन्दु' दृग के नहीं दिल के टुकड़े हैं ये ।
चल चुकी इन पै शम्शीर घनश्याम की ॥

पद ६१

भक्त बनता हूँ मगर अधमों का हूँ शिरताज भी ।
देखकर पाखण्ड मेरा हँस पड़े बृजराज भी ॥
कौन मुझसे बढ़के पापी होगा इस संसार में ।
सुनके पापों की कहानी डर गये यमराज भी ॥
क्यूँ पतित उनसे कहें सरकार तुम तारो हमें ।
हैं पतित पावन तो खुद रक्खेंगे अपनी लाज भी ॥
'बिन्दु' दृग के, दिल हिलादें क्यों न दीनानाथ का ।
दर्दे दिल भी साथ है और दुख भरी आवाज भी ॥

पद ६२

सच पूँछो तो मुझको है नही ज्ञान तुम्हारा ।
पर दिल में रहा करता है कुछ ध्यान तुम्हारा ॥
माना कि गुनहगार हूँ पापी हूँ अधम हूँ ।
सब कुछ हूँ मगर किसका हूँ ? भगवान तुम्हारा ॥
फ़रियाद, अश्क़, आह, की गर चाह है तुमको ।
इस तन में है मोजद ये सामान तुम्हारा ॥

लाज़िम है तुम्हें तारना भक्ती के बिना भी।
भक्ती से जो तारा तो क्या अहसान तुम्हारा॥
अधमों की किया करते हो गर मेहमा नवाज़ो।
तो 'बिन्दु' भी सरकार है मेहमान तुम्हारा॥

पद ६३

रे मन दीवाने नटवर श्याम पुकार।
नटवर श्याम पुकार रघुवर राम पुकार।
जो मूढ़ श्याम सुन्दर का भजन करेगा नहीं।
तो भव समुद्र से तू जन्म भर तरेगा नहीं॥
जो तू पुकारेगा उसको तो वह खबर लेगा।
पकड़ के हाथ तुझे पल में पार कर लेगा॥
उसका नाम जगत जीवों का करता है निस्तार।
नटवर श्याम पुकार॥
दुखी जनों को उसी श्याम का सहारा है।
उसी को दीन अनाथों का प्रम प्यारा है॥
उजड़ती देखी जो बस्ती वो बसाई उसने।
हमेशा लाज ग़रीबों की बचाई उसने॥
'बिन्दु' वही भक्तों के कारण लेता है अवतार।
नटवर श्याम पुकार।

पद ६४

बैठे हो कहाँ रूठ के बृजधाम बसइया।
दिखलादो दरश अब तो हे बृजधाम कन्हैया॥
है कितनी शर्म गर आनन्द उपजाओ न करुणा कर।
पुकारें दीन तुमको और तुम आओ न करुणा कर॥

अधम तारे हज़ारों तुमने लेकिन हमको तारो तो।
जो करुणा सिंधु हो भव सिंधु से हमको उबारो तो॥
देखें तो भला कैसे हो गिरिवर के उठइया।
दिखलादो दरश अब तो हे बृजराज कन्हैया॥
तुम्हारे हर क़दम पर अपनी हम आँखें बिछा देंगे।
जो आओगे हमारे पास तो दिल में बिठा लेंगे॥
मगर ऐसा न हो यह प्रथना बेकार हो जाए।
दिखादो वह झलक अपनी कि बेड़ा पार हो जाए॥
सुनलो ये बिनय 'बिन्दु' की फ़रियाद सुनइया।
दिखलादो दरश अब तो हे बृजराज कन्हइया॥

[छठा भाग]

पद ६५

❀ प्रार्थना ❀

जय जय जन–सङ्कटहारी, महिमा प्रभु ! अगम तुम्हारी।
सकल लोक सञ्चालक पालक, मोहन मदन मुरारी॥
अविचल, अमल, असुर-दल-नाशक, मायापति मन-हारी।
महिमा प्रभु ! अगम तुम्हारी॥
जग धर, विश्वम्भर, मुरलीधर करुणाकर बनवारी।
कमलापति, कमलाक्ष, कृपानिधि, चक्र-सुदर्शन-धारी॥
महिमा प्रभु' अगम तुम्हारी॥
जयगोबिन्द, गुणकर गुणनिधि, 'बिन्दु' विश्व-हितकार।
निराकार, साकार, अलख, लख, अगुण-सगुण अवतारी॥
महिमा प्रभु ! अगम तुम्हरी॥

पद ९६

बेकार कोई करता है क्यों? तक़रार हमारी आँखों से।
वह भी खुद देखे साँवलिया, दिलदार हमारी आँखों से॥
होगा वह निराकार, निर्गुण, निर्लेप, निरंजन भी होगा।
हमको दिखलाई पड़ता है, सरकार हमारी आँखों से॥
वह कैसी छटा अनोखी है, वह कैसा रूप मनोहर है?
इन बातों का ले ले कोई इज़हार हमारी आँखों से॥
यह कैसे मानें हम! उस का कुछ नामो निशाँ या पता नहीं।
जब दिल में आया करता है, सौ बार हमारी आँखों से॥
गर उसे देखना चाहो तो, कुछ 'बिन्दु' आँसुओं के देखो।
क़तरे क़तरे में लेता है, अवतार हमारी आँखों से॥

पद ९७

कोशिश हज़ार करके भी ढूँढें जो उम्र भर।
तुम क्या हो? क्या नहीं हो? ये होगी नहीं खबर॥
आज़ाद हो इतने, फिरा करते हो दर बदर।
पाबन्द हो इतने कि हो हर स्वाँस के अन्दर॥
ज़ाहिर हो तो इतने हो कि हर शै में जल्वागर।
छिपते हो तो इतने, कहीं आते नहीं नज़र॥
फिर दूर हो इतने कि हो इस अक़्ल से बाहर।
नज़दीक हो इतने कि बनाया है दिल में घर॥
मिलते नहीं लुटाए कोई लाख सीमों ज़र।
मिलते हो ग़रीबों को तो आँसू के 'बिन्दु' पर॥

पद ९८

तू नहीं अगर है दिल में तो यह ढाँचा बोल रहा है क्यों ?
गर दिल में है तो दिल तुझको हर जगह टटोल रहा है क्यों ?
साकार अगर है तो अपना आकार नहीं दिखलाता क्यों ?
है निराकर तो झूठे आकारों में डोल रहा है क्यों ?
कुछ वज़न अगर है !तेरा तो फिर क्यूं अनन्त कहलाता है ?
है नहीं वज़न तो मिट्टी का पुतला भी तोल रहा है क्यों ?
पर्दा है नहीं पसन्द तुझे तो पर्दे में क्यों बैठा है ?
पर्दे में है तो पर्दे के बाहर मुँह खोल रहा है क्यों ?
तू "बिन्दु" रूप से भवसागर रचकर भी सागर में न मिला ?
फिर अपने अंश 'बिन्दु' को भी सागर में घोल रहा क्यों ?

पद ९९

वह दिलही नहीं जिस दिलमें कभी साँवलिया तेरी याद न हो
वह याद नहीं जिसमें तुझसे कुछ लुत्फ़ भरी फ़रियाद न हो।
फ़रियाद नहीं है वह जिसमें, हो चाह न तुझसे मिलने की
वह चाह नहीं जिसमें कि तेरे आशिक़ का घर बरबाद न हो।
बरबादी भी वह क्या ? जिसमें रुस्वा न सरे बाज़ार हुए
रुसवाई भी वह क्या ? जिसमें कुछ जोशे जुनूँ आबाद न हो।
वह जोशे जुनूँ भी क्या? जिसमें कुछ 'बिन्दु' न आँखों से टपकें
वह 'बिन्दु' भी क्या!जिनसे, उल्फ़त दरिया की लहर ईजाद न हो

पद १००

अड़ा हूँ आज तो इस ज़िदपै कि कुछ पाके हटूँ।
या हार जाऊँ या खुद आपको हरा के हटूँ॥

मुराद मन की जो पाऊँ तो यश बढ़ाके हटूँ।
नहीं तो आपकी घर-घर हँसी कराके हटूँ॥
तजुर्बा आपकी बाँहों का कुछ उठा के हटूँ।
या करामात मैं आहों की कुछ दिखा के हटूँ॥
या दीनबन्धु से इक़रार ही लिखा के हटूँ।
या अश्रु 'बिन्दु' में यह नाम ही डुबा के हटूँ॥

पद १०१

जग असार में सार-रसना हरि-हरि बोल।
यह तन झीँझँरी नबइया।
केवल है हरि नाम खेवइया॥
होजा भव से पार-रसना हरि-हरि बोल।
अपने तन को बीन बनाले।
प्रेम-स्वरों में तार चढ़ाले॥
राम नाम झनकार-रसना हरि-हरि बोल।
जीवन क़र्ज़ लिया है तूने।
चुकता कुछ न किया है तूने॥
ऋण का भार उतार रसना ०॥
अधिक नहीं कुछ कुछ करले तू।
'बिन्दु' बिन्दु से घट भरले तू॥
धर ले धन-भण्डार-रसना ०॥

पद १०२

जल्वये यार है कहाँ, ज़ख्मी दिलो जिगर में है।
मस्तों की मस्त धुन में है, आशिक़ों की नज़र में है॥
मर्दों की सख्त जाँ में है ज़ालिमों के फ़ना में है।
सच्चों की सच ज़ुबा में है, जिन्दा दिलों के ज़र में है॥
पहुँचे हुओं की चाह में, भटके हुओं की राह में।
बिछड़े हुओं की आह में, उजड़े हुओं के घर में है॥
मचले हुओं के मान में, रूठे हुओ की शान में।
बहके हुओं की तान में, वहशी दिलों के सर में है॥
प्रेमी–हृदय के धाम में, ज्ञानी के आत्माराम में।
ध्यानी के 'बिन्दु' श्याम में, बिरही के चश्मे–तर में है॥

पद १०३

रूठ कर बोलो न घनश्याम तो चारा क्या है।
हाँ, मगर कहदो कि दर्शन में इजारा क्या है॥
जो निगाहों को मेरी खुद ही बुलाते हो तुम्हीं।
तो बतादो कि भला मेरा इशारा क्या है॥
खींच ली आँखों ने तस्वीर तुम्हारी जो कहीं।
मेरी तक़दीर है अहसान तुम्हारा क्या है॥
अपने गर एक खरीदार से तुम होगे खिलाफ।
इसमें नुक़सान तुम्हारा है, हमारा क्या है॥
न जलन दिल की मिटायें जो अश्रु 'बिन्दु' कहीं।
तो विरह आग से बचने का सहार क्या है॥

पद १०४

ये साँवले को मनाने की राह करते हैं।
कि जान--बूझ के कुछ-कुछ गुनाह करते हैं॥
कभी तो यह था कि उनको ही चाहते थे मगर।
अब उनको चाहने वलों की चाह करते हैं॥
तमाशा ये है कि मुझ पर निगाह है लेकिन।
निगाह मेरी बचा कर निगाह करते हैं॥
वो रंजो-ग़म के बहाने जो छेड़ते हैं हमें।
तो गोया हमसे सुलह की सलाह करते हैं॥
ख़फा हैं लाख मगर 'बिन्दु' आँख के लेकर।
सम्हल के देखते हैं वाह-वाह करते हैं॥

पद १०५

ये न कहना कि अजी! क्या भला चोरी में।
लो सुनाता हूँ तुम्हें जो है मज़ा चोरी में॥
देखो संसार का सब भेद ढँका चोरी में।
और संसार का करतार छिपा चोरी में।
देह तो जड़ है इसी वास्ते प्रत्यक्ष भी है।
इसमें चैतन्य जो बठा है कहाँ! चोरी में॥
'बिन्दु' वेदों ने भी जिसका कभी पाया न पता।
ग्वाल-बालों को वो गोकुल में मिला चोरी में॥

पद १०६

या तो जादू का तुझे श्याम! हुनर आता है।
या तेरे चाहने वालों में असर आता है॥

जाता जिस कूचे में हूँ तेरा ही घर आता है।
सर झुकाता हूँ जहाँ तेरा ही दर आता है॥
दिल के शीशे में तू इस तौर उतर आता है।
जिस तरफ देखता हूँ तू ही नज़र आता है॥
'बिन्दु' आँसू का नहीं आँख में भर आता है।
प्रेम-सागर से ये अनमोल गुहर आता है॥

पद १०७

विरही की विरह वेदनायें सुनकर भी भूले जाते हो।
दो चार पलों के जीवन को पल-पल पर क्यों कलपाते हो॥
सीखा है तीर छोड़ना तो कुछ औषधि करना भी सीखो।
यदि घाव नही भर सकते तो, क्यों चितवन चोट चलाते हो॥
पहले ही सोच समझ लेते, मैं भला बुरा हूँ, कैसा हूँ।
जब बाँह पकड़ ही ली तो, फिर अब क्यों बृजराज लजाते हो॥
विरहा नल में जल जाना भी मेरा तुमको स्वीकार नहीं।
जब जलने लग जाता हूँ तो छिब २ कर छपि दिखलाते हो॥
इससे भी अधिक मिलेंगी पर ऐसी न मिलेंगी प्रणेश्वर।
दृग 'बिन्दु' मोतियों की माला क्यों पैरों से ठुकराते हो॥

पद १०८

सभी तुमसे कहते हैं हाल अपना अपना
दिखाते हैं तुमको कमाल अपना अपना॥
है बाज़ारे मज़हब में हर दिल का सौदा।
बताते हैं सब सच्चा माल अपना अपना॥

किसी में तू आकार फंसे इसलिये सब ।
बढ़ाते हैं उल्फ़त का जाल अपना अपना ॥
भरे सब की आँखों में आँसू के क़तरे ।
गुहर अपना अपना है, लाल अपना अपना ॥
ख़रीदे हैं दीनों के दृग 'बिन्दु' तूने ।
पसन्द अपनी २ ख़याल अपना अपना ॥

पद १०६

हिन्दू कुल का है सम्मान श्री गोबिन्द और गीता से ।
सब शुभ गति का है सामान, श्री गोबिनद और गीता से ॥
गीता धर्म शास्त्र की शान ।
गीता-वैदिक विमल विधान ॥
मन हो जाता तत्व स्थान ।
'श्री गोबिन्द और गीता से ॥
पाठ गीता का सदा करना कुलोचित कर्म है ।
शब्द गीता के सुमरना ही सनातन धर्म है ॥
चित्त में श्री कृष्ण के सिद्धान्त धरना चाहिये ।
हिन्दुओं को नित्य गीता पाठ करना चाहिये ॥
मिलता जिनको गीता ज्ञान ।
उनका जब होता है प्रस्थान ॥
पाते पद निर्वाण महान ।
श्री गोविन्द और गीता से ॥
है वो हिंदू जिसको हिंदू-जाति का अभिमान हो ।
सर्वदा अपने सदाचारों पै जिसका ध्यान हो ।
वेद, शास्त्र, पुराण-वचनों पर अटल विश्वास हो ।
दास हो गोबिन्द का गीता की पुस्तक पास हो ॥

जो जन गाते गीता गान ।
उनके हो जाते भगवान् ॥
मिलता अमृत 'बिन्दु' का दान ।
श्री गोविन्द और गीता से ॥

पद ११०

कौन है गुलशन कि जिस गुलशन में रोशन तू नहीं ।
कौन है वह गुल कि जिस गुल में तेरा खुशबू नहीं ॥
तू ही लैला, तू ही शीरीं, हज़रते यूसुफ तुही ।
कौन है आशिक़ जो तेरे इश्क़ में मजनू नहीं ॥
जब जिलाना मारना भी एक तमाशा है तेरा ।
क्यूँ न फिर बे खौफ हाथों में तेरे दिल दूं नहीं ॥
ना समझ था, तब ये ख्वाहिश थी कि कुछ समझूँ तुझे ।
जब समझ आई तो यह समझा कि कुछ समझूँ नहीं ॥
'बिन्दु' कहता है कि मैं हूँ ? जब जुदा दरिया से है ।
मिल गया दरिया में फिर कहता है कुछ भी हूँ नहीं ॥

पद १११

संसार के कर्तार का आकार न होता ।
तो उसका ये संसार भी साकार न होता ॥
साकार से जाहिर है निराकार की हस्ती ।
साकार न होता तो निराकार न होता ॥
हम मान भी लेते कि वो दृष्टी से परे हैं ।
आँखों में अगर उसका चमत्कार न होता ॥
व्यापक ही सही, सबमें वो, रहता मगर कहाँ ?
रहने को अगर जिस्म का आधार न होता ॥

आँखों से निकलते न कभी 'बिन्दु' के मोती।
निर्गुण का सगुण से जो बँधा तार न होता।

पद ११२

जब से घनश्याम इस दिल में आने लगे।
क्या कहूँ ? रंग क्या क्या दिखाने लगे॥
आये यूँ ही जो एक दिन टहलते हुए।
कुछ झिझकते हुये, कुछ सम्हलते हुए॥
चुपके चुपके से दिल लेके चलते हुए।
मैंने पकड़ा जो बाहर निकलते हुए॥
मोहिनी डाल कर मुस्कराने लगे।
क्या कहूँ० ?
एक दिन उनके आने का बतलाऊँ ढब।
आ गये नैन से ही लगा कर नक़ब॥
बाँध कर ले चले जानों- दिल माल सब।
मैंने देखा तो पूछा कि यह क्या गज़ब॥
कुछ मचल कर वो मुरली बजाने लगे।
क्या कहूँ० ?
एक दिन ख्वाब में ही खड़े आप हैं।
दिल उड़ाने की धुन में अड़े आप हैं॥
मैं ये बोला कि हज़रत बड़े आप हैं।
क्यूं मेरे दिल के पीछे पड़े आप हैं॥
चोट चितवन की चित पर चलाने लगे।
क्या कहूँ० ?
एक दिन आप आये तो इस तौर से।
दर्दे दिल बनके दिल में उठे ज़ोर से॥

मैंने देखा उन्हें जब बड़े गौर से।
भागने फिर न पाये किसी ओर से
बन गये 'बिन्दु' आँखों से जाने लगे।
क्या कहें० ?

पद ११३

वही प्यारा है—जिसका हुस्न हर दिलको हिलाता हो।
वही है नूर जो हर दिल की कलियों को खिलाता हो॥
उसे हम इश्क़ क्या समझें! जो दिल को तोड़ ही डाले।
वही है इश्क़ जो बे दर्द दिल से दिल मिलाता हो॥
वो कैसा ग़म? जा करवाये शिकायत दिलसे दिलबर की।
वही ग़म है जो दिल को याद दिलबर का दिलाता हो॥
असर वह क्या निगाहों का? कि जिस पर मर मिटे आशिक़।
निगाहों का असर वह है, कि मरते को जिलाता हो॥
वो कैसा 'बिन्दु' आँसू का? जो निकले दिलको तड़पाकर।
वो है आँसू-जो दिल को सब्र का प्याला पिलाता हो॥

पद ११४

चाहे मैं भूलूँ तो भूलूँ मोहन! तू मत मुझको भूल।
जग प्रपञ्च का प्रबल पातकी, पावन पथ प्रतिकूल॥
अधम, अंध हूँ, चलता हूँ अपनी रुचि के अनुकूल।
मोहन! तू मत मुझको भूल०॥
अश्रय हीन सृष्टी तरु से हूँ, क्या शाखा, क्या मूल।
अभिलाषा यह है बन जाऊँ, कल्पवृक्ष का फूल॥
मोहन तू मत मुझको भूल॥

रक्षा करे न चक्र सुदर्शन, शङ्कर का न त्रिशूल !
रहे सदा फहराता शिर पर, तेरा पीत दुकूल ॥
मोहन ! तू मत मुझको भूल० ॥
काया क्लेशित अश्रु 'बिन्दु' दृग हृदय विरह की शूल ।
हे बृजनाथ ! अनाथ दीन को, देदे पग तल-धूल ॥
मोहन ! तू मत मुझको भूल० ॥

[सातवां भाग]
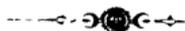
पद ११५

* प्रार्थना *

रे मन प्रति स्वांस पुकार यही, जय राम हरे घनश्याम हरे ।
तन नौका की पतवार यही, जय राम हरे घनश्याम हरे ॥
जग में व्यापक आधार यही, जग में लेता अवतार यही ।
है निराकार साकार यही, जय राम हरे घनश्याम हरे ॥
ध्रुव को ध्रुव पद दातार यही, प्रह्लाद गले का हार यही ।
नारद बीना का तार यही, जय राम हरे घनश्याम हरे ॥
सब सुकृतों का आगार यही, गङ्गा यमुना की धार यही ।
श्री रामेश्वर हरद्वार यही, जय राम हरे घनश्याम हरे ॥
सज्जन का साहूकार यही, प्रेमी जन का व्यापार यही ।
सुख 'बिन्दु' सुधा का सार यही, जय राम हरे घनश्याम हरे ॥

पद ११६

न यूँ घनश्याम तुमको दुख से घबरा-करके छोड़ूँगा ।
जो छोड़ूँगा ? तो कुछ मैं भी तमाशा करके छोड़ूँगा ॥

अगर था छोड़ना मुझको, तो फिर क्यूँ हाथ पकड़ा था।
जो अब छोड़ा तो मैं, जानै न क्या, क्या करके छोड़ूँगा॥
मेरी रुसवाइयाँ देखो ? मज़े से शौक़ से देखो।
तुम्हें भी मैं सरे बाज़ार रुसवा करके छोड़ूँगा॥
तुम्हें है नाज़ यह, बेदर्द रहता है हमारा दिल।
मैं उस बेदर्द दिल में, दर्द पैदा करके छोड़ूँगा॥
निकाला तुमने ? अपने दिलके, जिस घरसे ? उसी घरपर।
अगर दृग 'बिन्दु' ज़िन्दा है ? तो क़ब्ज़ा करके छोड़ुँगा॥

पद ११७

हमेशा दीनों को छेड़ कर भी, सुना जो करते हो चार बातें।
तुम्हें भी यह शौक़ है कि कोई, सुनाये हमको हज़ार बातें॥
हमारे चिढ़ने में तुमको भगवन, ज़ुरूर कुछ लुत्फ़ आता होगा।
तभी तो सहते हो हँस के हरदम, कड़ी कड़ी नागवार बातें॥
ये सोचते हो, जो बेकसों की, मुसीबतें जल्द टाल देंगे।
तो फिर सुनायगा कौन हमको, ये तैश की तर्जदार बातें॥
कहा था किसने ? कि पापियों के, उधारने का क़रार करलो।
क़रार जब कर चुके हो, तो फिर सुनोगे खुद लाखबार बातें॥
ज़ुबान जब बेरुखी तुम्हारी, बयान करने में थक चुकी है।
तो अश्रु के 'बिन्दु' बनके निकलीं ये दर्द की बेशुमार बतें॥

पद ११८

तुम्हारी कृपा है तो दुश्मन का डर क्या।
तुम्हारे ग़ुलामों को खौफो खतर क्या॥
शरण में जो चरणों की, सर आचुका है।
खिलाफ़ उसके कोई उठायेगा सर क्या॥

दया की नजर से जो तुम देखते हो।
करेगी किसी की भला बद नज़र क्या॥
बनाते हो बिगड़ी हुई बात जब तुम।
बिगाड़ेगा नाचीज़ कमतर बशर क्या॥
अनाथों के दृग 'बिन्दु' पर तुम न रूठो।
तो कर लेगा सारा जहाँ रूठ कर क्या॥

पद ११९

भजन श्यामसुन्दर का करते रहोगे।
तो संसार सागर से तरते रहोगे॥
कृपा नाथ बेशक मिलेंगे किसी दिन।
जो सत्संग पथ से गुजरते रहोगे॥
चढ़ोगे हृदय पर सभी के सदा तुम।
जो अभिमान गिरि से उतरते रहोगे॥
न होगा कभी क्लेश मन को तुम्हारे।
जो अपनी बड़ाई से डरते रहोगे॥
छलक ही पड़ेगा दया सिन्धु का दिल।
जो दृग 'बिन्दु' से रोज भरते रहोगे॥
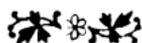
पद १२०

गुलाम गर्चे ख़ता बे शुमार करते हैं।
मगर दयालु, न उन पर बिचार करते हैं॥
जो किसी तौर उन्हें कुछ भी अपना मान चुका।
उसे वो प्राणों से भी बढ़के प्यार करते हैं॥
कुटिल हो क्रूर हो, खल हो मगर हो इनसे लगन।
तो उसके ऐबों का वह खुद सुधार करते हैं॥

जो सच्चे दिल से करें एक बार याद उन्हें ।
वो दिल में याद उसे लाख बार करते हैं ॥
जो डूबता हो गुनाहों से 'बिन्दु' भर में कहीं ।
वो उस अधम को भी भवसिंधु पार करते हैं ॥

पद १२१

कुछ दशा अनोखी उनकी बतलाते हैं ।
जो मन मोहन के प्रेमी कहलाते हैं ॥
जब से दिलदार हुआ साँवलिया प्यारा ।
तब से छूटा जग का सम्बन्ध हमारा ॥
हर बार हर जगह रुक कर यही पुकारा ।
है किधर छिपा दिलवर घनश्याम हमारा ॥
क्या खबर उन्हें हम कहाँ, किधर जाते हैं ।
जो मनमोहन के प्रेमी कहलाते हैं ॥ १ ॥

परवाह नही गर तन के वस्त्र फटे हैं ।
बिखरे हैं सर के बाल लटे लटपटे हैं ॥
सूखे टुकड़े ही खाकर दिवस कटे हैं ।
फिर भी स्नेह पथ पर अलमस्त डटे हैं ॥
बन वृक्षों को निज दुख सुख समझाते हैं ।
जो मनमोहन के प्रेमी कहलाते हैं ॥ २ ॥

जग भोग, और उद्योग, रोग से माने
झोंपड़े और नृप महल एक ही जाने ॥
पकवान मिलें या मिलें चनों के दाने ।
दोनों में खुश हैं मोहन के मस्ताने ॥
भ्रम शोक मोह मन में न कभी लाते हैं ।
जो मन मोहन के प्रेमी कहलाते हैं ॥

मिल गई जहाँ पर जगह पड़े रहते हैं।
सर्दी, गर्मी, बरसात, धूप सहते हैं॥
ख़ामोश किसी से कभी न कुछ कहते हैं।
रस सिन्धु दृगों से प्रेम 'बिन्दु' बहते हैं॥
नाचते, कभी हँसते, रोते, गाते हैं।
जो मन मोहन के प्रेमी कहलाते हैं॥

पद १२२

सुघर साँवले पर लुभाए हुए हैं।
कि सर्वस्व अपना लुटाये हुए हैं॥
अदा, मुस्कराहट, चलन, और चितवन॥
ये मेहमान मन में बसाये हुए हैं॥
कृपा की नज़र उनकी कितनी है मुझ पर।
कि घर जिस जिगर में बनाये हुए हैं॥
न भूलेगा अहसान उनका मेरा दिल।
कि नज़रों पै इसको चढ़ाये हुए हैं॥
दृगों के ये दो 'बिन्दु' हैं श्याम इससे।
कि घनश्याम इनमें समाये हुए हैं॥

पद १२३

गर प्रेम की इस दिल में लगी घात न होती।
तो सच है कि मोहन से मुलाक़ात न होती॥
सरकार को नज़राने में देता मैं भला क्या ?
कुछ पास गुनाहों की जो सौग़ात न होती॥

क्यों होते मुखातिब वो भला मेरी तरफ़ को।
आहों में कशिश की जो करामात न होती॥
बस दर्दे मुहब्बत का है यह सारा तमाशा।
यह दिल में न होता तो कोई बात न होती॥
दृग 'बिन्दु' बताते हैं कि घनश्याम हैं दिल में।
घनश्याम न होते तो ये बरसात न होती॥
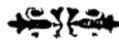
पद १२४

श्री राम धुन में जब तक, मन तू मगन न होगा।
जग जाल छूटने का तब तक जतन न होगा॥
व्यापर धन कमा कर तू लाख साज सजले।
होगा सुखी न, जब तक सन्तोष धन न होगा॥
जप, यज्ञ, होम पूजा, व्रत और नेम करले।
सब व्यर्थ है जो मुख से हरि का भजन न होगा॥
संसार की घटा से क्या? प्यास बुझ सकेगी।
चातक दृगों को जब तक, घनश्याम धन न होगा॥
तू तौल कर जो देखे. आँखों का प्रेम मोती।
एक 'बिन्दु' पर त्रिलोकी भर का वज़न न होगा॥

पद १२५

हे नाथ दयावानो के शिर मौर बतादो।
छोड़ूँ मैं भला आपको किस तौर बतादो॥
हाँ शर्त ये करलो, तो मैं हट जाऊँगा दर से।
अपना सा कृपा सिन्धु कोई बतादो॥

गर धाम में सरकार के रह सकता नहीं हूँ।
तो द्वार प पड़ने के लिये ठौर बतादो ॥
रैदास, अजामिल, सदन, व्याध व गणिका।
रहते हों जहाँ मुझको वही ठौर बतादो ॥
आँसू की झड़ी पर भी दया कुछ नहीं करते।
दृग 'बिन्दु' का कब तक य चले, दौर बतादो ॥

पद १२६

क्या वह स्वभाव पहला सरकार अब नहीं है।
दीनों क वास्ते क्या दरबार अब नहीं है ॥
या तो दयालु मेरी दृढ़ दीनता नहीं है।
या दीन का तुम्हें ही दरकार अब नहीं है ॥
पाते थे जिस हृदय से आश्रय अनाथ लाखों।
क्या वह हृदय दयाका भंडार अब नहीं है ॥
जिससे कि द्विज सुदामा त्रयलोक पागया था।
क्या उस उदारता में कुछ सार अब नहीं है ॥
दौड़े थे द्वारिका से जिस पर अधार होकर।
उस अश्रु 'बिन्दु' से भी क्या प्यार अब नहीं है ॥

पद १२७

जिससे बृजमण्डल का मन गोपाल मनमोहन में है।
उस मधुर वात्सल्य की झांकी हमारे मन में है ॥
योगियों का तत्व, ब्रह्मानन्द जो वेदान्त का।
खेलता फिरता यशोदा नन्द के आँगन में है ॥
है अचम्भा सृष्टि के कर्तार का भी कमल।
चोर बनकर गपियों के दूध, दधि माखन में है ॥

एक यह कौतुक अनोखा देखिये बृजराज का।
विश्व जिससे है बँधा उखल के वह बन्धन में है॥
अङ्ग में बृज-धूलि गोरस 'बिन्दु' हैं मुखचन्द्र पर।
शम्भु सा योगीश भी बलिहार इस दर्शन में है॥

पद १२८

क़ैद दुनियाँ! किस अजब जादू की है टोने की है।
जिससे क़ैदी जीव को नफ़रत नहीं होने की है॥
मोह के हाते में काली कोठरी अज्ञान की।
उस अंधेरे में ही सारी जिन्दगी खोने की है॥
शाह मुल्जिम, पैर में दोनों ने पहनी बेड़ियाँ।
फ़र्क इतना है कि एक लोहे की एक सोने की है॥
काल पहरेदार ने कैसा दिया है सख्त काम।
टोकरी कर्मों की सर पर रात दिन ढोने की है॥
मौज के झोकों ने फेंका 'बिन्दु' को सागर से दूर।
बस यही एक बात पछताने की है, रोने की है॥

पद १२९

बहुत दिन से तारीफ़ सुन कर तुम्हारी।
शरण आ गया श्याम सुन्दर तुम्हारी॥
जो अब टाल दोगे मुझे अपने दर से।
तो होगी हँसी नाथ दर दर तुम्हारी॥
सुना है कि उनको न करुणा सताती।
जो रहते हैं करुणा नजर पर तुम्हारी॥
यही प्रर्थना है यही याचना है।
जुदा हूँ न नज़रों से पल भर तुम्हारी॥

ये दृग 'बिन्दु तुमको ख़बर दे रहे हैं।
कि है याद दिल में बराबर तुम्हारी ॥
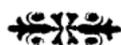
पद १३०

वो जानें श्याम की नज़रों के मज़े कस कम के।
जिन्होंने खूब सहे वार दिल पै हँस हँस के ॥
मिठास मिल चुकी उनको है मधुर मूरति की।
भ्रमर हैं जो कि कमल मुख पराग रस रस के ॥
उठा चुके हैं जो कुछ नाज़ कभी मोहन के।
उन्हें हैं याद वो अन्दाज़ उनकी नस नस के ॥
ग़ज़ब कमाल अमानत में है ख़यानत का।
जिगर पै करते हैं क़ब्ज़ा जिगर में बस बस के ॥
नशे में रूप के फन्दे में जाल उल्फ़त के।
तड़पते रहते हैं आँखों के 'बिन्दु' फँस फँस के ॥

पद १३१

है प्रेम जगत में सार और कुछ सार नहीं।
कहा घनश्याम ने ऊधो से वृन्दाबन ज़रा जाना।
वहाँ की गोपियों को ज्ञानका कुछ तत्व समझाना ॥
विरह की वेदना में वे सदा बेचैन रहती हैं।
तड़पकर आह भरकर और रो रो कर ये कहती हैं ॥
है प्रेम जगत में सार और कुछ सार नहीं ॥ १ ॥
कहा ऊधो ने हँसकर, मैं अभी जाता हूँ वृन्दाबन।
ज़रा देखूँ कि कैसा है कठिन अनुराग का बन्धन ॥

हैं कैसी गोपियाँ जो ज्ञान बलको कम बताती हैं ।
निरर्थक लोक लीला का यही गुण गान गाती है ॥
है प्रेम जगत में सार और कुछ सार नहीं ॥२॥

चले मथुरा से जब कुछ दूर वृन्दावन निकट आया ।
वहीं से प्रेम ने अपना अनोखा रंग दिखलाया ॥
उलझ कर वस्त्र में काँटे लगे ऊधो को समझाने ।
तुम्हारा ज्ञान परदा फाड़ दगे प्रेम दीवाने ॥
है प्रेम जगत में सार और कुछ सार नहीं ॥३॥

विटप झुक कर ये कहते थे इधर आओ इधर आओ ।
पपीहा कह रहा था पी कहाँ यह भी तो वतलाओ ॥
नदी यमुना की धारा शब्द हरि हरि का सुनाती थी ।
भ्रमर गुञ्जार से भी यह मधुर आवाज आती थी ॥
है प्रेम जगत में सार और कुछ सार नहीं ॥४॥

गरज़ पहुँचे वहाँ था गोपियों का जिस जगह मंडल ।
वहाँ थी शाँत पृथ्वी, वायु धीमी, व्योम था निर्मल ॥
सहस्त्रों गोपियो के मध्य थीं श्री राधिका रानी ।
सभी के मुख से रह रह कर निकलती थी यही बानी ॥
है प्रेम जगत में सार और कुछ सार नहीं ॥५॥

कहा ऊधो ने यह बढ़ कर कि मैं मथुरा से आया हूँ ।
सुनाता हूँ सन्देशा श्याम का जो साथ लाया हूँ ॥
कि जब यह आत्मसत्ता ही अलख निर्गुण कहाती है ।
तो फिर क्यों मोह वश होकर वृथा यह गान-गती है ॥
है प्रेम जगत में सार और कुछ सार नहीं ॥६॥

कहा श्री राधिका ने तुम सन्देशा खूब लाये हो ।
मगर यह याद रक्खो प्रेम की नगरी में आये हो ॥
सँभालो योग की पूँजी न हाथों से निकल जाये ।

कहीं विरहाग्नि में यह ज्ञान की पोथी न जल जाये ॥
है प्रेम जगत में सार और कुछ सार नही ॥७॥
अगर निर्गुण हैं हम तुम, कौन कहता है खबर किसकी ?
अलख हम तुम हैं तो किस २ को लखती है नज़र किसकी ॥
जो हो अद्वैत के क़ायल तो फिर क्यों द्वैत लेते हो ।
अरे खुद ब्रह्म होकर ब्रह्म को उपदेश देते हो ॥
है प्रेम जगत में सार और कुछ सार नहीं ॥ ८ ॥
अभी तुम खुद नहीं समझे कि किसको योग कहते हैं ।
सुनो इस तौर योगी द्वैत में अद्वैत रहते हैं ॥
उधर मोहन बने राधा, वियोगन की जुदाई में ।
इधर राधा बनी हैं श्याम, मोहन की जुदाई में ॥
है प्रेम जगत में सार और कुछ सार नहीं ॥९॥
सुना जब प्रेम का अद्वैत उधो की खुली आँख ।
पड़ी थी ज्ञान मद की धूल जिसमें वह धुली आँखें ॥
हुआ रोमांच तन में 'बिन्दु' आँखों से निकल आया ।
गिरे श्री राधिका पग पर कहा गुरु मंत्र यह पाया ॥
है प्रेम जगत में सार और कुछ सार नहीं ॥१०॥

पद १३२

कृपा की न होती जो आदत तुम्हारी ।
तो सूनी ही रहती अदालत तुम्हारी ॥
जो दीनों के दिल में जगह तुम न पाते ।
तो किस दिल में ? होती हिफ़ाजत तुम्हारी ॥
ग़रीबों की दुनियाँ है आबाद तुमसे ।
ग़रीबों से है बादशाहत तुम्हारी ॥

न मुल्जिम ही होते, न तुम होते हाकिम ।
न घर घर में होती इबादत तुम्हारी ॥
तुम्हारी ही बल्कत के दृग 'बिन्दु' हैं यह ।
तुम्हें सौंपत हैं अमानत तुम्हारी ॥

[आठवां भाग]

पद १३३

अहो ! शङ्कर भोले भगवान ।
अतुल करुणाकर कृपानिधान ॥

हो जिस भाँति वाह्य अन्तर में, भगवन व्याप्त समान।
उसी भाँति पूजन का भी है, सूक्ष्म स्थूल विधान ॥
त्रिदल त्रिकोण, बिल्व-पत्रों से, मिलता है यह ज्ञान ।
क्यों न करें सत, रज, तम-मिश्रित यह तन तुम्हें प्रदान ॥
फल धतूर देते है तुमको, मादक तत्व-प्रधान ।
उत्तम हो यदि देदें मनका, मादक फल अभिमान ॥
गङ्गोदक सम मान रहे हो, जब जन का जल दान ।
क्यों न करो ? फिर प्रेम—'बिन्दु'–गंगा में सुखद-स्नान

पद १३४

ऐ मेरे घनश्याम ! हृदयाकाश पर आया करो ।
ग्रीष्म ऋतु कलिकाल की है धूप, तुम छाया करो ॥

दामनी के बिन दया जल-दान दे सकते नहीं।
इसलिये श्री राधिका को साथ में लाया करो॥
जिसकी गर्जन में सरस अनुराग की है ध्वनि भरी।
उस मधुर मुरली से जन मन मोर हर्षाया करो॥
प्यास है जिनको तुम्हारे, दर्शनों की ही सदा।
उन तषा-मय चातकों के, दृग न तरषाया करो॥
प्रेम के अङ्कुर बिरह की अग्नि में झुलसे नहीं।
यदि समय पर कुछ कृपा के 'बिन्दु' बरसाया करो॥

पद १३५

मिला है मुझको क़िस्मत से, ख़याले रिन्द मस्ताना।
पिया करता हूँ हरदम, श्याम की उलफ़त का पैमाना॥
मज़ा है बेखुदी का यह, कि मैं दुनियाँ मैं हूँ लेकिन।
न जाना मैंने दुनियाँ को न दुनियाँ ने मुझे जाना॥
मुझे है सिर्फ़ अपने यार के दीदार से मतलब।
चहै मन्दिर या मस्जिद हो, चहै काबा या बुतख़ाना॥
हमेशा बस ये रिश्ता, चाहता हूँ, प्यारे मोहन से।
मैं उनको दिलरूबा समझूँ, वो समझें मुझको दीवाना॥
नही हैं 'बिन्दु' दृग में, मोम दिल मोती के दाने हैं।
विरह की आग में पड़कर, पिघल जाता है हर दाना॥

पद १३६

श्याम सुन्दर तुझे कुछ मेरी ख़बर है कि नहीं।
तेरे दिल पर मेरी आहों का असर है कि नहीं॥
ऐ मसीहाये जहाँ, आ के ज़रा देख तो ले।

क़ाबिले ग़ौर मेरा दर्दे जिगर है कि नहीं ॥
इम्तेहाँ के लिए इक, तीरे नज़र छोड़ तो दे।
देखें इस दिल पै भी पड़ती ये नज़र है कि नहीं॥
तू न आये न सही, पर ये बतादे मुझको।
तेरी तस्वीर की इस दिल में गुज़र है कि नहीं॥
'बिन्दु' आँखों से निकलते ही दिखा देंगे तुझे।
प्रेम सागर में ये डूबा हुआ घर है कि नहीं॥

पदा १३७

तेरो कौन सँगाती, हरी बिन।
झूठी जगत जमाती, हरी बिन॥
नारी सब सुख पावति पति सों, दिन प्रति हिय हरषाती।
धन, बल, रूप घटे सोइ नारी, कलह करति दिन राती॥
भले दिनन के साथी सब हैं, बन्धु सखा सुत नाती।
बुरे दिनन कोउ बात न पूछत, बनत प्राण के घाती॥
कञ्चन द्वार हज़ारन झूमत, हय हाथिन की पाँती।
काल करत जब अपनों फेरा, सन्पत्ति काम न आती॥
अब ही जागु जतन कुछ करिले, फिरि करि है केहि भाँती।
अब चेतन घृत 'बिन्दु' न रहि है, बुझि है जीवन बाती॥

पद १३८

जीवन का मैंने सौंप दिया, सब भार तुम्हारे हाथों में।
उद्धार पतन अब मेरा है, सरकार तुम्हारे हाथो में॥
हम तुमको कभीं नहीं भजते, फिर भी तुम हमें नही तजते।
अपकार हमारे हाथों में, उपकार तुम्हारे हाथों में॥

हम में तुम में भेद यही, हम नर हैं तुम नारायण हो।
हम हैं संसार के हाथों में, संसार तुम्हारे हाथो में॥
कल्पना बनाया करती हैं, इक सेतु विरह के सागर पर।
जिससे हम पहुँचा करते हैं, उस पार तुम्हारे हाथो में॥
दृग 'बिन्दु' कह रहे हैं, भगवन, दृग नाव विरह सागर में है।
मँझधार हमारे हाथों में पतवार तुम्हारे हाथो में॥

पद १३९

यही हरि भक्त कहाते हैं, यही सद् ग्रन्थ गाते हैं।
कि जाने कौनसे गुण पर दयानिधि रीझ जाते हैं॥
नहीं स्वीकार करते हैं, निमन्त्रण नृप सुयोधन का।
बिदुर के घर पहुँच कर भोग छिलकों का लगाते हैं॥
न आये मधुपुरी से गोपियों की दुख कथा सुनकर।
द्रपदजा की दशा पर द्वारका से दौड़ आते हैं॥
न रोए बन गमन में, श्री पिता की वेदनाओ पर।
उठा कर गीध को निज गोद में आँसू बहाते हैं॥
कठिनता से चरण धोकर मिले कुछ 'बिन्दु' बिधि हरको।
वो चरणोदक स्वयं केवट के घर जाकर लुटाते हैं॥

पद १४०

तौलने बैठा हूँ मैं आज।
सम्पति वाला कौन बड़ा है? हम तुममें बृजराज॥
इस शरीर डाँडी पर होगा तुलने का साज।
रात और दिन बन जावेंगे दो पलड़ों का साज॥
आठ प्रहर हरि-नाम ध्वनि का होगा सूत्र-समाज।
ऊपर की प्रतूलिका होगी, प्रभु सेवक की लाज॥

अश्रु 'बिन्दु' के बाँट बनाकर कर लेंगे अन्दाज़।
कृपा तुम्हारी अधिक हुई या मेरा पाप जहाज़ ॥

पद १४१

न यज्ञ 'साधन' न तप क्रियायें,
न दान ही हमने कुछ दिये है ॥
परन्तु मन मैं है यह भरोसा,
पीयूष हरिनाम का पिये हैं ॥
न वेद बिधि का विधान है कुछ,
न आत्म अनुभव का ज्ञान है कुछ ॥
यही है केवल कि श्याम सुन्दर,
चरण तुम्हारे ही गह लिये हैं ॥
न बुद्धि बिद्या ही काम आती,
न पूर्व के पुण्य ही हैं साथी ॥
प्रभो! कृपा दृष्टि है तुम्हारी,
कि जिसके बल पर ही हम जिये हैं ॥
अधम हैं अपराध लीन हैं हम,
सभी तरह दीन हीन हैं हम ॥
कहाते हो तुम अधम उधारण,
इसी पै विश्वास दृढ़ किये हैं ॥
तुम्हारी छबि ज्योति के लिये ही,
है 'बिन्दु' घृत पुतलियाँ हैं बत्ती ॥
शरीर दीवट है जिसके ऊपर,
दृगों के सुन्दर ये दो दिये हैं ॥

पद १४२

न शुभ कर्म धर्मादि धारी हुँ भगवन् ।
तुम्हारी दया का भिखारी हूँ भगवन् ॥
न विद्या न बल है, न सुन्दर सुमति है ।
न जप है, न तप है, सद्ज्ञान गति है ॥
न भवदीय चरणों में श्रद्धा सुरति है ।
दुराशामयी दुश्चरित प्रकृत है ॥
अधम हूँ अकल्याणकारी हूँ भगवन् ।
तुम्हारी दया का भिखारी हूँ भगवन् ॥
जो अनमोल नर जन्म था मैंने पाया ।
उसे तुच्छ विषयादिकों में गँवाया ॥ १ ॥
न परलोक का दिव्य साधन कमाया ।
किसी के न इस लोक में काम आया ॥
वृथा भूमि के भार भारी हूँ भगवन् ।
तुम्हारी दया का भिखारी हूँ भगवन् ॥ २ ॥
किसी का न उपदेश कुछ मानता हूँ ।
न अपने सिवा और की जानता हूँ ॥
कथन शुद्ध सिद्धान्त मय छानता हूँ ।
सभी से सदा दम्भ हठ ठानता हूँ ॥
कठिन-क्रूर दण्डधिकारी हूँ भगवन् ।
तुम्हारी दया का भिखारी हूँ भगवन् ॥ ३ ॥
विकृत वृत्ति है पूर्व-कृत-कर्म-फल ।
पड़ा आवरण शुद्ध-चेतन-विमल में ॥
बँधी आत्म-सत्ता अविद्या प्रबल में ।
ये मन-मृग फँसा मृग-तृषा 'बिन्दु' जल में ॥
महादीन, दुर्बल, दुखारी हूँ भगवन् ।
तुम्हारी दया का भिखारी हूँ भगवन् ॥ ४ ॥

पद १४३

जो हरि-भक्तों की दुनियाँ है वो यह गुण गान करती है।
कि प्रभु-पद, कञ्ज रज दासों को जीवन-दान करती है॥
न जाने कौन सी चैतन्यता है इसके कण।कण में।
कि जो जड़ जल की धारा में भी पैदा जान करती है॥
जिसे बाँधा था हरि ने उसके जब सर पर ये पड़ती है।
तो बलि के द्वार पर प्रभु का निवासस्थान करती है॥
न क्यों इन्सानियत देगी हमारे मोम दिल को भी।
कि जब यह खुश्क दिल पत्थर को भी इन्सान करती है॥
ग़जब है इसके धोवन-जल का जो इक 'बिन्दु' भी छूले।
उसे यह विष्णु, ब्रह्मा और शिव भगवान करती हैं॥

पद १४४

हे नाथ! पद कमल का, मुझको पराग करना।
या गुञ्ज-मालिका के, भीतर का ताग करना॥
जिसको अधर पै धर कर, करते हो प्रेम वर्षा।
उस सरस-बाँसुरी का, मृदु मधुर राग करना॥
रासेश्वरी सहित तुम, जिसमें बिराजते हो।
ब्रजभूमि की वो लतिका तरु, कुञ्ज बाग करना॥
या श्री चरण महावर का 'बिन्दु' राग करना।
या गोपियों के सुन्दर सिर का सुहाग करना॥

पद १४५

जब दर पै तुम्हारे ही अधमों का ठिकाना है।
फिर मेरी ही क़िस्मत में क्यूँ रञ्ज उठाना है॥

तारोगे तो तर लेंगे, छोड़ोगे तो बैठे हैं।
दरबार से अब हर्गिज़, उठ कर नहीं जाना है॥
मेरी तो कोई करणी, निभने की नहीं भगवन्।
जैसे भी निबाहो अब, तुमको ही निभाना है॥
फ़रियाद के सुनने में, है कौन सिवा तुमसे।
गर तुम न सुनो मेरी फिर किसको सुनाना है॥
दृग'बिन्दु'की शक्लों में हैं ख्वाहिशें इस दिल की।
ज़रिया तो है आखों का, आँसू का बहाना है॥

पद १४६

दो शुभसंगति दीनदयाल।
जो मानव मन कर देती है मानस राज मराल।
यद्यपि वानर वेश, देश बन, गृह गिरि, तरुकी डाल॥
किन्तु राम सेवा से घर घर पुजे अञ्जनीलाल।
कला चतुर्दश-हीन क्षीण गत काम कलङ्क कराल॥
'बिन्दु' वारि में बहकर बनता है वारीश-विशाल।
सुमन-संग से चींटी चढ़ती चन्द्रभाल के भाल॥

पद १४७

बसहु मन! मनमोहन के पाँव।
पग तल-भूमि-रेख-कुंजन बिच, प्रेम कुटीर बनाव।
बाग विराग बिचार विटप में रस, प्रसून प्रकटाव॥
तिनके सिंचन हित नैनन सों विमल, 'विन्दु' बरसाव॥

पद १४८

मुझसा नमकहराम न और।
कभी नहीं उनका गुण गाता, खाता जिनका कोर।
अधम अटपटा अधिक आतमीमण्डल का शिरमौर॥
स्वामी की न गुलामी करता, बदनामी हर तोर।
हूँ कलङ्क का 'बिन्दु' चाहता पद-नख-शशि में ठौर॥

पद १४९

हरि बोल मेरी रसना घड़ी-घड़ी।
व्यर्थ बिताती है क्यों जीवन, मुख मन्दिर में पड़ी पड़ी॥
नित्य निकाल गोबिंद नाम की स्वास-स्वास से लड़ी लड़ी।
जाग उठे तेरी ध्वनि सुनकर, इस काया की कड़ी-कड़ी।
बरसादे प्रभु नाम सुधा रस बिन्दु 'बिन्दु' से झड़ी-झड़ी॥

पद १५०

मस्ती में हमारी भी जो परवा नहीं करते।
हम उनकी खुशी के लिये क्या क्या नहीं करते॥
हक़ उनका ये हासिल है हुकूमत करें हम पर।
हम उनकी गुलामी का भी दावा नहीं करते॥
हम उनको मनाते हैं, जो हर बात में हमसे।
लड़कर भी यह कहते हैं, कि बेजा नहीं करते॥
दुनियाँ के जो पर्दे से भी बेपर्द हैं उनसे।
हम पर्दा नशीं होके भी पर्दा नहीं करते॥

दृग 'बिन्दु' का जंजीर पिन्हाते हैं जो हमको।
हम उनकी नज़र कैद से निकला नहीं करते॥

पद १५१

वो खुश क़िस्मत है जिसका श्यामसुन्दर से लगा दिल हो।
मगर दर्दे जुदाई का मज़ा उस दिल को हासिल हो॥
तड़प हो, आह हो ग़म हो बिलखना हो, या रोना हो।
ये सब सहकर भी उनकी फर्माबरदारी में शामिल हो॥
अजब हो लुत्फ राहे इश्क़ पर इस तौर चलने में।
ख्याले यार हो नज़दीक लेकिन दूर मंजिल हो॥
बसर करने की खातिर इस जहां में सोहबत दो हों।
ग़रीबों का या मजमा हो, या मस्तानों की महफ़िल हो॥
तरक़्क़ी ख्वाहिशे दीदार की हो दिन ब दिन इतनी।
कि हर दृग 'बिन्दु' हरि के देखने को आंख का तिल हो॥

पद १५२

श्याम मनहर से मन को लगाया नहीं।
तो मज़ा तूने नर का पाया नहीं॥

सुयश उनका श्रवण में समाया नहीं।
कीर्ति गुण गान उनका जो गाया नहीं॥
ध्यान में उनके यदि तू लुभाया नहीं।
उनके चरणों की सेवा में आया नहीं॥

तो मज़ा तूने नर तन का पाया नहीं॥१॥

उनके अर्चन का अनुराग छाया नहीं।
द्वार पर उनके सर को झुकाया नहीं॥
दास या मित्र उनका कहाया नहीं।
उनपै सर्वस्व अपना लुटाया नहीं॥

तो मज़ा तूने नर तन का पाया नहीं॥२॥

प्रेम में उनके जीवन विताया नहीं।
वेदना मय हृदय को बनाया नहीं॥
अश्रु का बिन्दु' दृग से गिराया नहीं।
उनकी विरहाग्नि में तन जलाया नहीं॥

तो मज़ा तूने नर तन का पाया नहीं॥३॥

पद १५३

कहूँ क्या मन मन्दिर की बात।
अकस्मात आ बैठा कोई, सुन्दर श्यामल गात।
मृदु भावों की सुमन कुञ्ज में रहता है दिन रात॥
उसकी मान भरी चितवन का पड़ता जब आघात।
तब अनुपम आनन्द अमृत की होती है बरसात॥
उसका मधुर हास रवि जब कर देता सुखद प्रभात।
प्रेम पराग 'बिन्दु' मय खिल जाते हैं दृग जल जात॥

[नवां भाग]

* प्रार्थना *

पद १५४

मातेश्वरी तू धन्य है, मातेश्वरी तू धन्य है।
कहता कोई माता तुझे, कहता कोई तू शक्ति है॥
कहता कोई तू प्रकृति है, कहता कोई आसक्ति है।
कहता कोई राधा तुझे, कहता कोई अनुरक्ति है॥
तू सर्वरूपा, प्रेमियों के, प्राण धन की, भक्ति है॥
तेरे अमित उपकार का, आनन्द अनुभव जन्य है।
मातेश्वरी तू धन्य है, मातेश्वरी तू धन्य है॥
तू कुटिल कलि दल के लिये, है कुलिश मूर्ति करालिका।
हरि हर विमुख नर के लिये कृत्या तुही, तू कालिका॥
तू प्रभु पदाश्रित जीव को, प्रत्येक पल प्रतिपालिका।
तू वैष्णवी है, वैष्णवों के कण्ठ तुलसी मालिका॥
तू ब्रह्म जीव मिलाप का, सद्ग्रन्थि सुदृढ़ अनन्य है।
मातेश्वरी तू धन्य है, मातेश्वरी तू धन्य है॥
तू कर्म योगी के लिये सत्कीर्ति पर ललाम है।
तू ज्ञानियों का शान्ति पूर्ण समाधि है सुखधाम है॥
तू ध्यानियों को अटल श्रद्धा मानसिक विश्राम है।
तुझ दामिनी से ही सुशोभित 'बिन्दु' मय घनश्याम है॥
तेरा उपासक जो नहीं, वह जीव कुटिल जघन्य है।
मातेश्वरी तू धन्य है, मातेश्वरी तू धन्य है॥

पद १५५

जो तू चाहे कि हो घनश्याम की,
मुझ पर नज़र पहले ।
तो उनके आशिक़ों की ख़ाकेपामे,
कर गुज़र पहले ॥
तरीक़ा है अजब इस इश्क़ की-
मन्ज़िल में चलने का ।
उसीका घर बना पहले, दिले-
मोहन की बस्ती में ।
कि जिसका दीनो दुनिया दोनों-
से उजड़ा है घर पहले ॥
मज़ा तब है कि क़ुर्बानी में हर इक-
ज़िद से बढ़ता हो ।
ये तन पहले, ये जाँ पहले, ये दिल-
पहले जिगर पहले ॥
न रो ! ऐ आँख ! तेरे 'बिन्दु' मोती-
गर्चे लुटते हैं ।
यक़ीं रख यह, कि उल्फ़त में-
नफ़ा पीछे ज़रर पहले ॥

पद १५६

कुछ अनोखा वो मेरा नन्द का लाला निकला ।
जिसकी उल्फ़त का हरेक लुत्फ़ निराला निकला ॥

क्यों न लेते भला वो इसको बड़े शौक़ के साथ।
उनकी हम शक्ल मेरा दिल भी तो काला निकला॥
इक नज़र में लुटी, कुछ ऐसी मेरे दिल की दुकान।
हर तरह ख्वाहिशे दुनियाँ का दिवाला निकला॥
अपनी चितवन के निशानात जो देखे उसने।
मेरा हर दाग़े जिगर नाज़ से पाला निकला॥
श्याम-सुन्दर को न हो नज़रे इनायत क्यूँकर।
जब कि दृग 'बिन्दु' भरा दर्द का प्याला निकला॥

पद १५७

घनश्याम हमारा मन मोहन, कुछ दोस्त है कुछ उस्ताद भी है।
कुछ होश में है, कुछ मस्त भी है, कुछ कैद है, कुछ आज़ाद भी है॥
कभी बेवफ़ा है मुँह मोड़ता है, कभी पल भर साथ न छोड़ता है।
इससे ये है ज़ाहिर मेरी खबर, कुछ भूल गया, कुछ याद भी है॥
बसतेहैं जो, उनको निकालता है, उजड़े है जो उनको सम्हालता है।
क्या खूब कि उसका खानये दिल, बीरान भी है, आबाद भी है॥
कभी हँसता है और हँसाता मुझे, कभी रूठता है तड़पाता मुझे।
सुख सिंधु भी है:दुख'बिन्दु' भीहै,कुछ मोम हैकुछ फ़ौलादभी है॥

पद १५८

आन पड़ी मँझधार कृष्णा नाव मेरी।
तू है खेवन हार, कृष्णा नाव मेरी॥
मोह निशा का अँधियारा षट् विकार तूफ़ान करारा।
किसी ओर मिलता न किनारा, तेरा ही है एक सहारा॥

चहे डुबो, चहे तार, कृष्णा नाव मेरी।
आन पड़ी मँझधार, कृष्णा नाव मेरी॥
तू केवट है बहुत पुराना, किस किसने है तुझको न बखाना।
विपति पड़े मैंने पहचाना, अब है और न मुझे ठिकाना॥
पल में करदे पार, कृष्णा नाव मेरी।
आन पड़ी मँझधार, कृष्णा नाव मेरी॥
खर्च राह का खूट गया है विषय स्वाँस धन लूट गया है।
बल का डाँडा टूट गया है, साहस सारा छूट गया है॥
तू ही पार उतार, कृष्णा नाव मेरी।
आन पड़ी मँझधार, कृष्णा नाव मेरी॥
अब तक हल्की दूब रही है, चलती फिरती खूब रही है।
अब भँवरों में ऊब रही है, 'बिन्दु' भार से डूब रही है॥
करके दया उबार, कृष्णा नाव मेरी।
आन पड़ी मँझधार, कृष्णा नाव मेरी॥

पद १५६

श्यामा तोरी नेह नगरिया न्यारी।
बाहर से कुछ देखि परत नहिं, भीतर शोभा भारी॥
कहन सुनन में सुखद मनोहर सब सुख साज सँवारी।
पै कोउ रहन चहे, तो वाको अतिही विषम कटारी॥
तन के नैन लखें, तो वामे, अति सूनी अँधियारी।
मन के नैन लखैं, तो भासै कोटि भानु उजियारी॥
योगी जन की गति जहँ नाहीं, ज्ञानिन की मति हारी।
तहाँ विहार करत निशि वासर, गोकुल की पनिहारी॥
भीतर पवन रात दिन सुलगै विरहानल चिनगारी।
बाहर दोऊ दृग बरसत हैं प्रेम 'बिन्दु' जल झारी॥

पद १६०

मेरे और मोहन के दरम्यान होकर ।
बसा है अजब इश्क़ मेहमान होकर ॥
मजा दर्द का लूटता है हमेशा ।
इधर जिस्म होकर उधर जान होकर ॥
उबलता है दोनों तरफ जोशे उल्फ़त का ।
इधर शोक होकर उधर शान होकर ॥
निकलते हैं दोनों की आंखों के अरमाँ ।
इधर 'बिन्दु' होकर उधर बान होकर ॥

पद १६१

प्रभो ! दो, यह पीड़ामय प्यार ।
जिसकी विषम वेदना में भी हो सुख का संचार ।
मनका मन मोहन से ऐसा बँध जाये कुछ तार ।
जिससे यह मन भी होजाये, मोहन का अवतार ॥
सुधि को सुधि न रहे, ऐसा हो विस्मृति का व्यापार ।
जीवन की गति में, होजाये जीवन गति भी भार ॥
उर उमँगादो, विरह सिन्धु को इतना अगम अपार ।
जिसके एक 'बिन्दु' में पड़कर पहुँच न पाऊँ पार ॥

पद १६२

घनश्याम ये तुझ पर मेरा मस्ताना हुआ दिल ।
अपना था जो अब तक वही बेगाना हुआ दिल ॥
जिस दिलमें था घर अपना, सजाया था जिसे खूब ।
सब ख्वाहिशें उसकी लुटीं वीराना हुआ दिल ॥

इस साँवली सूरत ने तो दुनियाँ ही बदल दी।
पहले जो था काबा वही बुतख़ाना हुआ दिल॥
तेरी मये उल्फ़त के जो पीने का हुआ शौक़।
तो जिस्म ये शीशा हुआ, पैमाना हुआ दिल॥
दृग 'बिन्दु' में भी तेरी सूरत का ये जादू।
जिस दिल ने इन्हें देखा वो दीवाना हुआ दिल॥
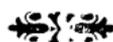
पद १६३

जो श्याम पर फ़िदा हो,
उस तन को ढूँढ़ते हैं।
घर श्याम का हो जिसमें,
उस मन को ढूँढ़ते हैं॥
जो बीत जाय प्रीतम-
की याद में विरह में।
जीवन भी देके, ऐसे—
जीवन को ढूँढ़ते हैं॥
सुख, शान्ति, में स्मृति में,
मति, में तथा प्रकृति में।
प्राणों की प्राणगति, में,
मोहन को ढूँढ़ते हैं॥
बँधता है जिसमें आकर,
वह ब्रह्म मुक्त बन्धन।
उस प्रेम के अनोखे—
बन्धन को ढूँढ़ते हैं॥

आहों की जो घटा हो,
दामिन हो दर्द दिल की ।
रस 'बिन्दु' बरसे जिससे,
उस घन को ढूँढते हैं ॥

पद १६४

यह तमन्ना है कि घनश्याम का शैदा बन जाऊँ ।
उनसे मिलनेके लिये, जानैं न क्या बन जाऊँ ॥
जिस्म जल जाय तो विरहाग्नि के शोलों में कहीं।
शौक़ से राह में उनकी में खाकेपा बन जाऊँ ॥
जान घुट जाय जुदाई के खरल में जो कहीं।
ऐसा पिस जाऊँ, कि आँखों का मैं, सुरमा बन बाऊँ ॥
दम निकल जाये उनके ही तसव्वुर में कहीं।
बस तो फिर साँवली सूरत का ही नक्शा वन जाऊँ ॥
'बिन्दु' आँखों के जो हम शक्ल बनालें मुझको।
ऐसा बह जाऊँ कि ब्रज की नदी यमुना बन जऊँ ॥
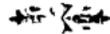
पद १६५

यूँ मधुर मुरली बाजी घनश्याम की।
धूम घर घर में मची घनश्याम की ॥
होगया मुरली का आशिक़ कुल जहाँ।
मुरली आशिक़ हो गई घनश्याम की ॥
मुरली ने ही, श्याम को, दी, राधिका।
विधि मिलादी दामनी घनश्याम की ॥
मुरलिका रस 'बिन्दु' बरसाती न जो।
शान घट जाती सभी घनश्याम की ॥

पद १६६

सदा श्याम श्यामा पुकारा करेंगे ।
नवल रूप निशदिन निहारा करेंगे ॥
यमुना तट, लता कुञ्ज, वृज बीथियों मैं ।
विचार कर ये जीवन गुज़ारा करेंगे ॥
मिलेगी जो रसिकों की जूठन प्रसादी ।
वही जीवका का सहारा करेंगे ॥
बसेंगे करीलों के काँटों में हर दम ।
जगत् कण्टकों से किनारा करेंगे ॥
जो दृग 'बिन्दु' से धाम धोया करेंगे ।
तो पलकों से पथ को बुहारा करेंगे ॥

पद १६७

यूँ अगर आप मोहन मुकर जाँयेगे ।
तो भला हमसे पापी किधर जाँयेगे ॥
अब तरेंगे नहीं तो ये सच जानिये ।
आपका नाम बदनाम कर जाँयेगे ॥
चाहते कुछ हो रिश्वत, तो है क्या यहाँ ।
हाँ गुनाहों से भण्डार भर जाँयेगे ॥
थी जो नफ़रत तो घर में बिठाया ही क्यों ।
जाय सर, ग़ैर के अब न घर जाँयेगे ॥
है यक़ीं 'बिन्दु' गर चश्मे तर से बहे ।
तो तुम्हें करके तर खुद भी तर जाँयेगे ॥

पद १६८

अगर घनश्याम का दिल,
आशिकों को दूर कर देता ।
था किसका दम कि घर घर,
में उन्हें मशहूर कर देता ॥
मज़ा कुछ तो मिला होगा-
अनोखा इश्क़ में तेरे ।
वर्ना जान क्यों अपनी-
फ़िदा मन्सूर कर देता ॥
ग़रज़ क्या थी उसे गोकुल में-
आकर ग्वाल बन जाता ॥
किसी का दर्द दिल उसको-
न गर मजबूर कर देता ॥
ज़हर चितवन की बर्छी का-
न आँखें 'बिन्दु' से ढलती ।
तो उनका दर्द पैदा-
दिल में एक नासूर कर देता ॥

पद १६९

मेरी और मोहन की बातें, या मैं जानूँ या वो जानें
दिल की दुख दर्द भरी बातें, या मैं जानूँ या वो जानें ॥
जब दिल में उनकी याद हुई, इक शक्ल नई ईजाद हुई ।
पल पल यह मस्त मुलाक़ातें, या मैं जानूँ या वो जानें ॥
नहिं जागता हूँ, नहिं सोता हूँ, नहिं हँसता हूँ, नहिं रोता हूँ ।
यह दर्दे जुदाई की रातें, या मैं जानूँ या वो जानें ॥

ग़म की घनघोर घटा गरजी, दामिनी वेदना की लरजी।
दृग 'बिन्दु' भरी यह बरसातें या मैं जानँ या वो जानें॥

पद १७०

दृग तीर तेरे मोहन! जिस दिल को ढूँढ़ते हैं।
हम उस तेरे तीरों के बिस्मिल को ढूँढ़ते हैं॥
गो लाख बार तीरे मिज़गाँ से कट चुके हैं।
हिम्मत यह है कि फिर भी क़ातिल को ढूँढ़ते हैं॥
पीकर जो मये उल्फ़त बेहोश हैं बेखुद हैं।
मन्जिल में पहुँच कर भी मन्ज़िल को ढूँढ़ते हैं॥
हम इश्क़ समन्दर में जिस दिल को खो चुके हैं।
हर 'बिन्दु' में आँखों के, उस दिल को ढूँढ़ते हैं॥

पद १७१

बताऊँ तुम्हें श्याम मैं क्या, कि क्या हूँ।
अगर पूँछिये सच तो बहुरूपिया हूँ॥

कभी जोशे उल्फ़त में हूँ यार तेरा,
कभी कारे बद से गुनहगार तेरा,
कभी जिन्स तू, मैं ख़रीदार तेरा,
कभी रूये गुल तू है, मैं ख़ार तेरा,

ख़ुदी में कभी आके, बनता ख़ुदा हूँ।
अगर पूँछिये सच तो बहुरूपिया हूँ॥

कभी वेद वक्ता, कभी पूर्ण ज्ञानी,
कभी हूँ उपासक, कभी धर्म ध्यानी,
कभी हूँ कुटिल, क्रोध मद मोह मानी,
कभी हूँ सहज शान्त मन कर्म वानी,

कभी ब्रह्म व्यापक अखिल सृष्टि का हूँ।
अगर पूँछिये सच तो बहुरूपिया हूँ ॥

कभी हुस्ने यूसुफ़ का दम भर रहा हूँ,
कभी दारे मन्सूर पर मर रहा हूँ,
कभी ग़ैर पर जाँ फ़िदा कर रहा हूँ,
कभी मौत अपनी से ख़ुद डर रहा हूँ,
कभी हूँ बक़ा और कभी मैं फ़ना हूँ।
अगर पूँछिये सच तो बहुरूपिया हूँ ॥

कभी कर्म योगी, कभी कर्म भोगी,
कभी हूँ मैं प्रेमी कभी हूँ वियोगी,
कभी स्वस्थ सुन्दर, कभी दीन रोगी,
कभी सत्यवादी, कभी धूर्त ढोंगी,
कभी क्षीण दीपक, कभी रविकला हूँ।
अगर पूँछिये सच तो बहुरूपिया हूँ ॥

कभी ख़ुश्क मिट्टी कभी शक्ल पानी,
कभी हूँ हवा औ फ़लक की निशानी,
कभी हूँ मैं आबे गुहर जिन्दगानी,
कभी हूँ मैं बचपन, बुढ़ापा जवानी,
तमाशे में आकर तमाशा हुआ हूँ।
अगर पूँछिये सच तो बहुरूपिया हूँ ॥

कभी दुख ही दुःख सर पर उठाता,
कभी सुख के सागर में ग़ोते लगाता,
कभी थाल पर थाल भोजन लुटाता,
कभी प्यास से 'बिन्दु' जल भी न पाता,
प्रभो आप नटवर हैं मैं नट बना हूँ।
अगर पूँछिये सच तो बहुरूपिया हूँ ॥

[दसवां भाग]

❀ प्रार्थना ❀

पद १७२

जय जय 'बिन्दु' और व्रजनन्दन ।
दोऊ बनबासी बन विहरत, दोऊ जन अभिनन्दन ।
दोऊ प्रगट होत अति आतुर, सुनत दीन दुख क्रन्दन ।।
द्रवत हृदय दोउन के देखे, फँसे दोऊ दृग फन्दन ।
दोऊ सोहाग सोहागिन के, विरहागिन के हित चन्दन ।।
रसिक जनन के दोऊ रसानिधि, मानिन मान निकन्दन ।
दोऊ जब मिल जात परस्पर, कटत जगत के बन्धन ।।

पद १७३

जिसने घनश्याम तेरे प्रेम का अरमान लिया ।
उसने हर तौर तेरे राज़ को पहचान लिया ।।
अक्ल में जिसकी तू आया, वो परेशान रहा ।
दिल में तू जिसके बसा, उसने तुझे मान लिया ।।
जान जो तुझसे चुराता है, वो अनजान रहा ।
जान दी जिसने तुझे उसने तुझे जान लिया ।।
परदए 'बिन्दु' ने यह सोच के दृग द्वार ढँके ।
दिल ने एक साँवला परदा नशीं मेहमान लिया ।।

पद १७४

ये झगड़ा है मोहन हमारा तुम्हारा ।
कि अब क्या हुआ ? बल वो सारा तुम्हारा ।।

जो निज कर्म से होते तरने के काबिल।
तो फिर ढूंढ़ते क्यूं सहारा तुम्हारा॥
न तारो तो ऐसा अधर्मी बनादो।
कि अवतार फिर हो दुबारा तुम्हारा॥
ग़रीबों की आँखों में जिस दिन से आया।
उसी दिन से है, 'बिन्दु' प्यारा तुम्हारा॥
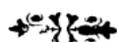
पद १७५

योगी न यती आक़िलो दाना, न बनादे।
कुछ श्याम बनाना है, तो मस्ताना बनादे॥
वह आह दे जिससे कि तुझे चाह हो मेरी।
वह दर्द दे, तुझको भी जो दीवाना बनादे॥
जिन मस्तों की नज़रों में तू हरदम है समाया।
बस मुझको उन्हीं नज़रों का नज़राना बनादे॥
इस दिल को मये इश्क़ का, मय ख़ाना बनादे॥
आँखों के हर एक 'बिन्दु' को पैमाना बनादे।

पद १७६

लगन श्याम से यूं लगाया करें हम।
मज़े दर्द दिलके उठाया करें हम॥
न यह लुत्फ़ कम हो कभी जिन्दगी भर।
वो रूठा करें, और मनाया करें हम॥
चुभें, उनके तीरे नज़र जब जिगर में।
वो ढूंढ़ा करें और छिपाया करें हम॥

ये अरमाने दिल कीं हज़ारों ही शक्लें ।
मिटाया करें वों बनाया करें हम ॥
उधर छेड़ कर मुस्कराया करें वो ।
इधर 'बिन्दु' हग से बहाया करें हम ॥

पद १७७

यही नाम मुख में हो हरदम हमारे ।
हरे कृष्ण गोविन्द मोहन मुरारे ॥
लिया हाथ में दैत्य ने जब कि खंजर ।
कहा पुत्र से, है कहाँ तेरा ईश्वर ॥
तो प्रह्लाद ने याद की आह भरकर ।
दिखाई पड़ा उसको खम्भे के अन्दर ॥
हैं नरसिंह के रूप में राम प्यारे ।
हरे कृष्ण गोविन्द मोहन मुरारे ॥
सरोवर में गज ग्राह की थी लड़ाई ।
न गज राज की शक्ति कुछ काम आई ॥
कहीं से मदद उसने जब कुछ न पाई ।
दुखी होके आवाज़ हरि को लगाई ॥
गरुड़ छोड़ नंगे ही पावों पधारे ।
हरे कृष्ण गोबिन्द मोहन मुरारे ॥
अजामिल अधम में न थी क्या बुराई ।
मगर आपने उसकी बिगड़ी बनाई ॥
घड़ी मौत की सर पै जब उसके आई ।
तो 'बेटे नरायन' की थी रट लाई ॥
तुरत खुल गये उसको बैकुण्ठ द्वारे ।
हरे कृष्ण गोविन्द मोहन मुरारे ॥

दुशासन ने जब हाथ अपने बढ़ाये।
तो दृग 'बिन्दु' थे द्रौपदी ने गिराए॥
न की देर कुछ द्वारिका से सिधाए।
अमित रूप यूँ बनके साड़ी में आए॥
कि हर तार थे आपका रूप धारे।
हरे कृष्ण गोविन्द मोहन मुरारे॥

पद १७८

जिस दर पे ठिकाना है वह दर कभी न ढूंढ़ा।
जिस घर में पहुँचाना है वह घर कभी न ढूंढ़ा॥
इस दिलसे उन्हें ढूंढ़ा, जिनसे नहीं कुछ हासिल।
दिल जिसने दिया है, वो दिलबर कभी न ढूंढ़ा॥
मन्दिर में उसे ढूंढ़ा मसजिद में उसे ढूंढ़ा।
एक बार मगर दिलके अन्दर कभी न ढूंढ़ा॥
गो लाख बार ढूंड़ा पर, अक्ल से हिकमत से।
आँखों में 'बिन्दु' आँसू भर कर कभी न ढूंढ़ा॥

पद १७९

जो नहिं प्रेम प्याला पिया।
वह जगत् में जन्म लेकर व्यर्थ ही क्यों जिया॥
जोग, जप, तप, व्रत नियम, साधन सभी कुछ लिये।
व्यर्थ है यदि प्रेम के रँग में रँगा नहिं हिया॥
रत्न, कंचन, अश्व, गज, गो दान, बहु विधि किया।
क्या हुआ यदि प्रेम पथ पर प्राण दान न दिया॥

प्रेम बिन जीवन, यथा घृत 'बिन्दु' के बिन दिया।
प्रेम के बिन देह जैसे पति बिहीना त्रिया॥

पद १८०

कन्हैया को एक रोज़ रोकर पुकारा।
कहा उनसे जैसा हूँ अब हूँ तुम्हारा॥
वो बोले कि 'साधन किये तूने क्या है,
मैं बोला 'किसे तुमने साधन से तारा'॥
वो बोले 'न दुनियाँ में आकर किया कुछ'।
मैं बोला कि 'अब भेजना मत दुबारा'॥
वो 'बोले परेशाँ हूँ तेरी बहस से'।
मैं 'बोला ये कहदो! तू जीता मैं हारा'॥
वो बोले कि ज़रिया तेरा क्या है मुझ तक'।
मैं बोला कि दृग 'बिन्दु' का है सहारा॥

पद १८१

धर्मों में सब से बढ़कर हमने ये धर्म जाना।
हरगिज़ कभी किसी के दिल को नहीं दुखाना॥
कर्मों में सब से बढ़कर बस कर्म एक यह है।
उपकार की वेदी पर प्राणों की बलि चढ़ाना॥
विद्या में सब से बढ़कर विद्या ये समझ ली है।
हरि रूप चराचर को मस्तक सदा झुकाना॥
जितने भी बल हैं, सबमें अति श्रेष्ठ बल यही है।
करुणा पुकार अपनी करुणेश को सुनाना॥
सब साधनों में बढ़कर साधन यही मिला है।
प्रभु के चरण कमल पर दृग 'बिन्दु' जल गिराना॥

पद १८२

मोहन और मोहन मस्तों के दिल का मिलता कुछ राज़ नहीं।
दिल में ही बातें होती हैं बाहर आता आवाज़ नहीं॥
तन तन्त्री के ही तारों पर अनुराग राग बज जाता है।
झनकार सुनाई पड़ती है दिखलाई पड़ता साज नहीं॥
लड़ते हैं, और झगड़ते हैं, रूठते, मचलते, हैं, लेकिन॥
मुख कमल खिला खुश रहता है जाहिर होते नाराज़ नहीं॥
जब विरह वेदना की चोटें, उर भेद भेद कर जाती हैं।
दृग 'बिन्दु' निकल पड़ते हैं, पर आती है कहीं दराज़ नहीं॥

पद १८३

ऐ श्याम मेरे दिल को वह मर्ज़ लगा देना।
हो दर्द तेरा जिसमें फिर हो न दवा देना॥
'एक दिन तो मिलेंगे ही बोलेंगे हँसेंगे ही।
इस ख्वाबे तमन्ना से हरगिज़ न जगा देना॥
हम तेरे तसव्वुर में बेहोश हैं पागल हैं।
दिखला के कहीं सूरत कुछ होश न ला देना॥
मिलने की जो तुझसे है ला दिल में लगा बेहद।
मिलकर न कहीं इसकी बुनियाद मिटा देना॥
ऐ यादे जुदाई तू इन आँखों के परदे पर।
हर 'बिन्दु' को दिलबर की तस्वीर बना देना॥

पद १८४

(होलिका)

क़ौमे हिन्दू में, न गर हर साल आती होलिका।
हरि भजन में क्या असर है? क्या बताती होलिका॥

भक्तवर प्रह्लाद ने झण्डा लिया हरि नाम का।
दैत्य कुल में कीर्तन करवा दिया हरि नाम का॥
देश को प्याला पिलाया, खुद पिया हरि नाम का।
जोश मुर्दा दिल में भी, ज़िन्दा किया हरि नाम का॥

ऐसे हरि जन पर, न कुछ भी ज़ुल्म ढाती होलिका।
हरि भजन में क्या असर है? क्या बताती होलिका॥१॥

बाप से प्रह्लाद, ज़िद करता था कीर्तन के लिये।
आफ़तों से कुछ नहीं डरता था कीर्तन के लिये॥
अपनी क़ुर्बानी का दम भरता था कीर्तन के लिये।
सर हथेली पर लिये फिरता था कीर्तन के लिये॥

आज़माइश में उसे चमका न जाती होलिका।
हरि भजन में क्या असर है? क्या बताती होलिका॥२॥

दैत्य कहते थे कि 'यह बेढब लड़ाई घर की है।'
दीन कहते थे 'लड़ाई ज़ुल्मो चश्मेतर की है॥'
भक्त कहता था 'लड़ाई जीव और ईश्वर की है।'
काल कहता था 'लड़ाई नरकी और नाहर की है॥'

फ़ैसला इसका न गर कुछ भी चुकाती होलिका।
हरि भजन में क्या असर है? क्या बताती होलिका॥३॥

राम कहने पर, छुरी नङ्गी जिगर के पार थी।
हाथ में माला फिरे तो हथकड़ी तैयार थी॥
हरि भजन जाने के बदले, जेल की दीवार थी।
कीर्तन करने के बदले कण्ठ पर तलवार थी॥

उस समय भी रंग अपना कुछ न लाती होलिका।
हरि भजन में क्या असर है? क्या बताती होलिका॥४॥

पर्वतों की चोटियों पर से गिराया भी गया।
फ़िर सुलाया कण्टकों पर जिस्म सारा ही गया॥

भर के प्याला भी हलाहल का पिलाया, पी गया।
मौत से हर तौर लड़कर भक्त बालक जी गया॥
ताक़त उस पर न अपनी आज़माती होलिका।
हरि भजन में क्या असर है ? क्या बताती होलिका।५॥
दैत्य बोला होलिका से जुल्म वह ईजाद कर।
रिश्तये उल्फ़त मिटाकर दिलको अब फौलाद कर॥
आग में जलती नहीं तू! याद आशीर्वाद कर।
खाक अपनी गोद में लेकर मेरी औलाद कर॥
इतना सुनकर भी न बालक को जलाती होलिका।
हरि भजन में क्या असर है? क्या बताती होलिका॥६॥
होलिका को आग में पहले बिठाया गोद में।
होलिका ने हरि के प्यारे को उठाया गोद में॥
भक्त ने भी इस क़दर आसन जमाया गोद में।
दौड़ कर बैकुण्ठ से भगवान आया गोद में॥
यह अचम्भा भी न भक्तों को दिखाती होलिका।
हरि भजन में क्या असर है ? क्या बताती होलिका॥७॥
आग की शोलाज़नी प्रह्लाद पर निष्फल गई।
दुर्जनों की की हुई तरकीब उल्टी चल गई॥
थे जलाते जिसको उसके सर से आफत टल गई॥
जो जलाने वाली थी अफसोस वह खुद जल गई॥
हरि विमुख होकर न इतना दण्ड पाती होलिका।
हरि भजन में क्या असर है ? क्या बताता होलिका॥८॥
होलिका जाहिर में तो बदनाम खोटी होगई।
हाँ मगर बातिन में उसकी उच्चकोटी होगई॥
क्योंकि हरिजन पर निछावर बोटी बोटी होगई।
भक्त के हग 'बिन्दु' की सच्ची कसौटी होगई॥

गर न उस प्रह्लाद पर जीवन लुटाती होलिका।
हरि भजन में क्या असर है? क्या बताती होलिका ॥६॥

पद १८५

(होली)

न क्यूँ आजाय खिच कर खुद भता ब्रजश्याम की होली
जो हरि भक्तों के मन मन्दिर में हो हरिनाम की होली ॥
कटोरी और पुतली खेलती हैं सुर्ख डोरों से।
तो गोया आँख में होती है राधेश्याम की होली ॥
गुलाले इश्क रँगे खून, पाकर जिस्म पिचकारी।
न खेली हरि से गर होली तो फिर किस काम की होली ॥
वो होली भी है क्या होली? जो कुछ क़ौमें मनाती हों।
ये हर इन्सान की होली है खासो आम की होली ॥
हरेक दृग 'बिन्दु' रंगे श्याम से रँग कर निकलते हैं।
इसे कहते है सच्चे आशिक़े बदनाम की होली ॥

पद १८६

(श्रीराम–नवमी)

हिन्द में प्रति वर्ष यह आती है नवमी राम की।
राम का सुमिरन करा जाती है नवमी राम की ॥
देश पर जब हो रहा दुष्टों का अत्याचार था।
हर तरफ़ संसार के हर घर में हा-हाकार था ॥
भूमि सह सकती न थी पापों का इतना भार था।
उस समय भारत में ईश्वर ने लिया अवतार था ॥

यह सबको सबक सिखा जाती है नवमी राम की।
राम का सुमिरन करा जाती है नवमी राम की॥
किस तरह माँ बाप का सत्कार करना चहिये।
किस तरह भाई से अपने प्यार करना चाहिये॥
किस तरह दीनों के प्रति उपकार करना चाहिये।
किस तरह इस देश का उद्धार करना चाहिये॥
राम के यह गुण बता जाती है नवमी राम की।
राम का सुमिरन करा जाती है नवमी राम की॥
चक्रवर्ती राज्य पद को त्यागने में तीव्र त्याग।
भील गीध निषाद से मिलने में था श्रद्धानुराग॥
वन में चौदह वर्ष बस जाने में था उत्तम विराग।
बज रहा था जिस्म की रग-रगमें सच्चाई का राग॥
याद यह बातें दिला जाती है नवमी रामकी।
राम का सुमिरन करा जाती है नवमी रामकी॥
प्रेम करने में भारत दृग 'बिन्दु' का आदर्श लो।
शरण जाने में विभीषण भाव का उत्कर्ष लो॥
दास बनने में सदा हनुमान का सा हर्ष लो।
मन्त्र यह प्रति पक्ष लो, प्रतिमास लो, प्रतिवर्ष लो॥
यह सन्देशा शुभ सुना जाती है नवमी राम की।
राम का सुमिरन करा जाती है नवमी राम की॥

[ग्यारहवां भाग]

ॐ प्रार्थना ॐ

पद १८७

हमारे दोनों एक धनी।
इत गोपाल श्याम नट नागर उत रघुवंश मनी॥
इत श्रीनन्द यशोदा आँगन क्रीडा करत घनी।
उत पालने झुलावत दशरथ कौशल्या जननी॥
इत मुरली शिर मोर मुकुटधर कटि काछे कछिनी।
उत कर शरधनु क्रीट की शोभा सुघर बनी॥
इत गोपिन के प्रेम भरे गोरस में देह सनी।
उत राजत शरीर पर दीननकी दृग 'बिन्दु' कनी॥
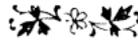
पद १८८

अब हम मोहन से अनुरागे।
जब तक सोये तब तक सोये, जब जागे तब जागे॥
दाग़ पड़े थे जो मन में, भव भ्रान्ति दाह से दागे।
भाव रत्न बन गये वही, जब प्रीति रीति रस पागे॥
श्वान समान फिरे, विषयों के दर-दर टुकड़े माँगे।
झूम रहे हैं अब मस्ती से, बँधे प्रेम के धागे॥
आत्म 'बिन्दु' तट पर बैठे थे कतिमत काग अभागे।
जानै कहाँ गये? जब हरि के कृपा कोर शर लागे॥

पद १८९

मन की मन में रहनी चहिये।
कहनी हो तो केवल मन मोहन से कहनी चहिये ॥
जो बीती सो बीती, अब आगे की गहनी चहिये।
जग के जो कुछ कहें कहें ? सब सुखसे सहनी चहिये ॥
पाप रेणु से भीति उठाई थी वह ढहनी चहिये।
दीन दायलु कृपालु चरण शरणागति लहनी चहिये ॥
अब मन में आशा तृष्णा का कीच न रहनी चहिये।
बहनी है तो प्रेम 'बिन्दु' की गङ्गा बहनी चहिये ॥
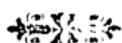
पद १९०

मोहन ? हम भी तुम से रूठे।
जान गये हम छली प्रपञ्ची, हो कपटी, हो झूँठे ॥
पहले शरण बुलाया था दे दे कर लोभ अनूठे।
अब इक बार दरश देने में भी दिखलाये अँगूठे ॥
सुनते थे देते हो सबको सब सुख भर भर मूँठे।
हमने शत शत 'बिन्दु' बहाये दिये न टुकड़े जूँठे ॥

पद १९१

मुझे नहीं नाथ कुछ है चिन्ता,
कि जब है मन्दिर ये मन तुम्हारा,
तुम्हीं से पाया था, कर रहा हूँ –
तुम्हीं को अर्पण भवन तुम्हारा ॥
बनाना चाहो इसे बनालो,
उजाड़ना हो उजाड़ डालो,

प्रभो तुम्हीं बाग़बाँ हो इसके—
है जिस्म सारा चमन तुम्हारा ॥
कराल कलि काल के ठगों ने,
इरादा कुछ और ही किया है,
सम्हालना लुट न जाय भगवन्
अमूल्य यह प्रेम धन तुम्हारा ।
विचार आँखों का है कि घटने—
न पाये आँसू की 'बिन्दु' धारा ।
भरे कलश द्वार पर मिलें, जब—
हृदय में हो आगमन तुम्हारा ॥

पद १६२

लगन उनसे अपनी लगाये हुए हैं ।
जो मुद्दत से मन को चुराये हुए हैं ॥
उठायेंगे हाथों में मुझको न क्यों कर ।
जो नख पर गोवर्द्धन उठाये हुए हैं ॥
निकालें भी उनको तो कैसे निकालें ।
कि रग-रगके भीतर समाये हुए हैं ॥
वो रूठें भी हमसे तो परवा नहीं है ।
हम उनके हृदय को मनाये हुए हैं ॥
लो भरना चहे अपने दामन को भरले ।
गुहर 'बिन्दु' उन पर लुटाये हुए हैं ।

पद १६३

रूठे हैं अगर श्याम तो उनको मनाये कौन ।
अपनी जो बनी शान है वह भी घटाये कौन ॥

कुछ उनका भला होता तो करते भी खुशामद।
अपनी गरज के वास्ते अहसाँ उठाये कौन?
अब तक रहे दोस्त बराबर का था दावा।
अब फर्ज़े बन्दगी की शरायत निभाये कौन?
माना कि जान उनकी है लेंगे वही आखिर।
पर बनके खतावार ये गर्दन झुकाये कौन?
गर क़द्र करें वो तो ये दृग 'बिन्दु' नज़र है।
वरना फिज़ूल खाक में मोती मिलाये कौन?

पद १९४

अब तो गोविन्द के गुण गाले।
सब कुछ भोग लिये जगके सुख सब अरमान निकाले॥
जितने पाप हुये जीवन में लेखा कौन सम्हाले।
उनका एक उपाय यही है जी भर कर पछताले॥
रंग बिरंगे फूल जगत के जितने देखे भाले।
कच्चा रंग सभी का छूटा, सभी पड़ गये काले॥
'बिन्दु' बिन्दु पापों से तूने घट के घट भर डाले।
उन्हें बहादे जल्द, बहा कर आँसू के पर नाले॥

पद १९५

श्याम सुन्दर को बस एक नज़र देख लें।
मोहनी मूर्ति का कुछ असर देख लें॥
श्री अवध में मिलें चाहे बृज में मिलें।
या इधर देखलें या उधर देख ले॥
ख्वा किसी भाव से, नाम से, रूप से।
पर बहाने किसी उनका घर देख लें॥

तार सकते हैं मुझसा अधम या नहीं।
देख लें उनकी हिम्मत जिगर देख लें॥
सिन्धु आनन्द का जिसको कहते हैं सब।
हम हों खुश गर उसे 'बिन्दु' भर देखलें॥

पद १६६

(तोता मैना प्रश्नोत्तरी)

मैना— अरे तेरी इक इक स्वाँस अमोल।
रे मन तोता हरि हरि बोल।
तोता— रसना ! ज्ञान मथा मत खोल।
मैना जग उपवन में डोल॥
रंग रंग के फूल खिले हैं,
बड़े भाग से भंग मिले हैं।
सुख साधन के सुफल फले हैं॥
अति आनन्द से अमृत ढले हैं।
सब के स्वाद टटोल।
मैना जग उपवन में डोल॥
मैना— सपने में एक बाग़ लगाया,
फूल फलों में मन ललचाया।
जब छूने को हाथ बढ़ाया,
जाग पड़ा कुछ भी नहीं पाया॥
यथा ढोल में पोल।
रे मन तोता हरि हरि बोल॥
तोता यदि सपना है जग उपासना,
जीव स्वप्न है स्वप्न वासना।

सपने को क्या स्वप्न कल्पना,
सपने में सपना है अपना ॥
इस बिचार को तोल।
मैना जग उपवन में डोल ॥

मैना - इस भ्रम में मत बन मतवाला,
यह तन अमर प्रेम का प्याला।
जिसमें सत् स्वरूप रस ढाला,
तू रस का है पीने वाला ॥
विष का 'बिन्दु' न घोल।
रे मन तोता हरि-हरि बोल ॥

पद १९७

प्रेम ही है अपना सिद्धान्त।
जिसने बना दिया है जीवन अमर कल्प कल्पान्त ॥
जप, तप, योग समाधि, यत्न सब किये, रहे उद्भ्रान्त।
मोहन मधुर मूर्त्ति लखते ही हुए सकल भ्रम शान्त ॥
नहीं वृत्तियाँ बदली, बस कर निर्जन बन एकान्त।
मन एकाग्र हुआ जब देखा रसिक जनों का प्रान्त ॥
संयम नियम योग हठ साधन करते रहे नितान्त।
बदल गई रुचि पढ़ कर गणिका अजामील वृत्तान्त ॥
फूले फिरते हैं जिस पर उद्धव से ज्ञान महान्त।
वृज गोपी दृग 'बिन्दु' धार में बहा वहीं वेदान्त ॥

पद १९८

हाँ मेरा मोहन मुरली वाला।
हाँ मेरा नन्द नँदन वृज ग्वाला ॥

जिसे गोद में नन्द खिलाएँ ।
जिसे मां यशुदा धमकाएँ ॥
जिसे बृज के ग्वाल चिढ़ाएँ ।
जिसे गोपियाँ नाच नचाएँ ॥

वही जीवन प्रेम का प्याला ।
हाँ मेरा मोहन मुरली वाला ॥

जिसमें दीनों के दिल की चाह थी ।
जिसमें बेकसों की परवाह थी ।
जिसमें दुखिया अधीनोंकी आह थी ।
जिसमें भक्तों के भावों की राह थी ॥

हाँ जिसमें जीवन का था उजाला ।
हाँ मेरा मोहन मुरली वाला ॥

जिसका प्रेम के वश था आना ।
जिसका जिस्म था प्रेम ख़ज़ाना ॥
जिसका प्रेमियों में था ठिकाना ।
जिसका प्रेमियों ने रस जाना ॥

हाँ जिसका पन्थ था प्रेम निराला ।
हाँ मेरा मोहन मुरली वाला ॥

जिसने गोपियों को तरसाया ।
जिसने ब्रह्मा को था भरमाया ॥
जिसने नख गिरिराज उठाया ।
जिसने गोरस 'बिन्दु' चुराया ॥

हाँ जिसने मस्तों को मौज से पाला ।
हाँ मेरा मोहन मुरली वाला ॥

पद १९९

कराल कलि काल में जो तेरा—
न हरि के सुमिरन से प्यार होगा।
तो फिर बतादे कि, किस तरह तू-
अपार भव सिन्धु पार होगा॥
विषय, तथा खाना और सोना,
सुखों में हँसना, दुखों में रोना।
यही रही खासियत, तो पशुओं-
में तेरा जीवन शमार होगा॥
अभी तो माना कि मोह प्यालों-
को, पी के अलमस्त हो रहा है।
मगर तू पछतायगा, कि जिस दिन,
नशे का आखिर उतार होगा॥
वो बाग़बाँ अपने इस चमन में,
खिला है खुद बनके गुलहज़ारों।
बतादे क्या है? पसन्द तुझको,
या गुल की खुशबू या खार होगा॥
ज़रूर बरसायेगा तड़प कर,
वो, अब्रे रहमत के 'बिन्दु' इक दिन।
जो सामने उसके खुद गुनाहों-
से, अपने तू शर्मसार होगा॥

पद २००

जाता कभी स्वभाव न खल का।
कितना ही सतसङ्ग करै वह सुजन साधु निर्मल का॥

मिश्री मिश्रित पथ से सिंचन करो वृक्ष के थल का।
किन्तु स्वाद कड़वा ही होग सदा निम्ब के फल का॥
चाहे अमृत ही अञ्जन बन जाये नेत्र कमल का।
किन्तु उलूक नहीं दर्शन कर सकता रवि मण्डल का॥
नाग प्रेम से पालो दे कर मधु, प्रसून कोमल का।
पर फुफकार छोड़ते ही उगलेगा सार गरल का॥
काला कम्बल लाख धुला लो रंग न होता हलका।
चिकने घट पर नहीं ठहरता एक 'बिन्दु' भी जल का॥

पद २०१

सदा अपनी रसना को रसमय बना कर।
हरीहर हरीहर हरीहर जपा कर॥

इसी जप से कष्टों का कम भार होगा,
इसी जप से पापों का प्रतिकार होगा,
इसी जप से नर तन का शृङ्गार होगा,
इसी जप से तू प्रभु को स्वीकार होगा,

ये स्वासों की दिन रात माला बना कर।
हरीहर हरीहर हरीहर जपा कर॥

इसी जप से तू आत्म बलवान् होगा,
इसी जप से कर्त्तव्य का ध्यान होगा,
इसी जप से सन्तों का सम्मान् होगा,
इसी जप से सन्तुष्ट भगवान होगा,

अकेले हो या साथ सबको मिला कर।
हरीहर हरीहर हरीहर जपा कर॥

जो श्रद्धा से इस जप को है नित्य गाता,
तो उसका यही जप है जीवन बिधाता,

यही जप पिता है यही जप है माता,
यही जप है इस जग में कल्याण दाता,
हरी का कोई रूप मन में बिठा कर।
हरीहर हरीहर हरीहर जपा कर ॥
ये जप जब तेरे मन को ललचा रहा हो,
वो रसिकों के रस पन्थ पर जा रहा हो,
मज़ा श्री हरी नाम का आ रहा हो,
हरी ही हरी हर तरफ़ छा रहा हो,
तो कुछ प्रेम के 'बिन्दु' दृग से बहा कर।
हरीहर हरीहर हरीहर जपा कर ॥

पद २०२

आया शरण हूँ तेरा, घनश्याम मुरली वाले।
दुनियाँ की आफ़तों से, करके कृपा बचाले ॥
उम्मीद है कि उन पर, तेरा नज़र न होगी।
मद-मोह के नशे में, जो खेल खेल डाले ॥
बनता हुई किसी की, लाखों बिगाड़ते हैं।
ऐसा है इक तुही जो, बिगड़ी हुई बनाले ॥
जब अंश मैं तेरा हूँ, जब पुत्र मैं तेरा हूँ।
फिर कौन है जो मुझको, तेरे सिवा सम्हाले ॥
दृग 'बिन्दु' के लेने में, शायद ये तुझको डर है।
पापों से गर्म हैं यह, कहीं डाल दें न छाले ॥

पद २०३

ऊधो ! हैं बे पीर कन्हाई।
हम सब के तन, धन, जीवन, लेकर भी दया न आई ॥

यदि प्रपंच मय झूठी थी जग की सब नेह सगाई
तो फिर क्यों न प्रथम ही हमको ज्ञान कथा समझाई ॥
पहले चञ्चलता शिशुता वश हँसि हँसि प्रीति बढ़ाई।
अब ग्रामीण ग्वालिनों के हित क्यों त्यागें ठकुराई ॥
माखन चोर कहा कर बृज में घर घर कीर्त्ति जगाई।
धन्य कूबरी, जिससे, पदवी, अलख ब्रह्म की पाई ॥
प्रेम विरह दृग 'बिन्दु' मालिका, मोह जाल ठहराई।
क्या पहचानें रत्न जिन्होंने बन बन गाय चराई ॥

पद २०४

पतझड़, न खिज़ाँ, है न तो गर्दो गुबार है।
मस्तों की ज़िन्दगी में, हमेशा बहार है ॥
ज़िन्दा दिली जहाँ है हम उस अंजुमन के है,
हम आशिक़े वतन हैं मगर खुश वतन के हैं,
सोहबत पसन्द भी है तो गुञ्चा दहन के हैं,
हम बुल बुले शैदा हैं मगर उस चमन के हैं,
जिसमें सिवाय गुल के खलिश है न ख़ार है।
मस्तों की ज़िन्दगी में हमेशा बहार है ॥
कोई भी अज़ो जिस्म के ख़ामोश नहीं हैं,
बल्के जहाँ के उनको मगर जोश नही हैं,
सब देखते सुनते भी हैं, बेहोश नहीं हैं,
पर अपनी ही हस्ती के उन्हें होश नहीं है,
हैं चूर नशे में, न नशे का खुमार है।
मस्तों की ज़िन्दगी में हमेशा बहार है ॥
फ़ौलाद तक़ब्बुर की शरारत मरोड़ दी,
फ़िक्रों की जो जंजीर बँधी थी वो तोड़ दी,

हर ख्वाहिशे हवा की हर एक चाल मोड़ दी,
मल्लाह के हाथों में ही क़िश्ती ये छोड़ दी,
अब डूबी है सागर में या सागर के पार है।
मस्तों की जिन्दगी में हमेशा बहार है ॥

महबूब की जब याद में आजाते हैं आँसू,
आबादिये हस्ती की हिला जाते हैं आँसू,
सैलाव आबे इश्क बढ़ा जाते हैं आँसू,
आँखों के 'बिन्दु' बनके बता जाते हैं आँसू,
दरियाये दिल की मौज है, मीठी फुहार है।
मस्तों की जिन्दगी में हमेशा बहार है ॥

[बारहवां भाग]

॥ प्रर्थना ॥

पद २०५

जय ब्रजराज कन्हैया लाल।
जिनकी मधुर मोहनी शोभा लखि दृग होत निहाल ॥
जो बृज बासिन के प्रिय बल्लभ सखा सनेही ग्वाल।
बृज गोपिन के श्याम सलोने प्राणनाथ गोपाल।
जिनके मुख मुरलिका मनोहर गावत गीत रसाल ॥
जिनकी अगम अपार अनोखी लीला ललित विशाल।
मोर मुकुट पीताम्बर कटि तट चलत त्रिभंगी चाल ॥
राजत रोली तिलक 'बिन्दु' श्रीयदुकुल भूषण भाल ॥

पद २०६

ये सच है मोहन कृपा न करते,
तो कौन अधमों को फिर बचाता ?
अगर न होते अधम ही जग में,
अधम उधारन कहाँ से आता ॥
अनेक अपराध प्रणियों के,
क्षमा वो करते हैं. यह सही है।
परन्तु अपराधी ही न होते,
तो कौन उनसे क्षमा कराता ॥
ये माना उनकी दयालुता ने,
उन्हें परेशान कर दिया है।
मगर न होती दया की शोहरत,
तो उनके दर पर ही कौन जाता ॥
पलट वो सकते हैं कर्म बन्धन,
जभी तो जगदीश हैं कहाते।
अगर हुकूमत न इतनी होती,
तो कौन हाकिम उन्हें बनाता ॥
न शौक़ से सर पै वो उठाते,
अधीन दीनों की आफतों को।
तो क्या ग़रज थी किसी को,
आँखों से 'बिन्दु' मोती की लड़ लुटाता ॥

पद २०७

ग़ैर मुमकिन है कि दुनियाँ,
अपनी मस्ती छोड़ दे।

इस लिये दिल ! तू ही यह,
बेकार बस्ती छोड़ दे ॥
तू न बन्दा बन खुदी का,
और खुदा भी तू न बन ।
हस्तिये उल्फ़त में मिल जा,
अपनी हस्ती छोड़ दे ॥
ख़ूब तरसाया है तेरी,
ख्वाहिशों ने ही तुझे ।
तू भी अब इन ख्वाहिशों को,
कुछ तरसती छोड़ दे ।
तुझको भी मन्सूर सा,
मशहूर होना है अगर ।
जानों दिल देने में अपनी,
तग दस्ती छोड़ दे ॥
'बिन्दु' आँखों के तेरे,
दिखलायेंगे फस्ले बहार ।
भर के आहों की घटाओं को।
बरसतो छोड़ दे ॥

पद २०८

ऐसी दुनियाँ को क्या करना ।
जिसमें मरना तो मरना है, जीना भी है मरना ॥
आज किसी का हुआ बिगड़ना, कल को हुआ सुधरना ।
यही चक्र है जिसमें प्रति दिन चढ़ना और उतरना ॥
माता, पिता, पुत्र, पत्नी का व्यर्थ भरोसा धरना ।
कोई नहीं किसी का, जैसा करना वैसा भरना ॥

यदि तू चाहे, कठिन मोह भ्रम शोक सिन्धु से तरना।
तो मन भ्रमर! श्याम पद पङ्कज नौका, बीच बिचरना ॥
उसको आवागमन, जन्म, मरणादिक से क्या डरना।
जिसके मुख से झरता है हरिनाम 'बिन्दु' का झरना ॥

पद २०९

मोहन हम तो बने तुम्हारे।
अब यह मर्ज़ी रही तुम्हारी, बनो, न बनो हमारे॥
जाति, पाति कुल, धर्म, धाम धन सब कुछ तुम पर वारे।
जैसा चाहो नाच नचालो सब प्रकार हैं हारे ॥
सुनते थे गज, गीध, अजामिल गणिका अधम उधारे।
पर जानें मेरे कारण बन्द कर लिये द्वारे ॥
छोड़ गये सब स्वारथ साथी अपनी राह सिधारे।
दीन, अधीन, मलीन, हीन के अब हो तुम्ही सहारे ॥
पूर्व कर्म कृत कुटिल प्रकृति वश छोड़े साधन सारे।
चढ़ा रहे चरणों पर केवल दृग जल 'बिन्दु' फुहारे॥
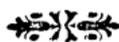
पद २१०

न तो रूप है न तो रंग है,
न गुणों की कोई भी खान है।
फिर श्याम कैसे शरण में लें,
इसी सोच फिक्र में जान है॥
नफ़रत है जिनसे उन्हें सदा,
उन्हीं अवगुणों में मैं बँधा।
कलि कुटिलता है, कपट भी है,
हठ भी है और अभिमान है॥

तन, मन, बचन से, विचार से,
लगी लौ है इस संसार से ।
पर स्वप्न में भी ता भूलकर,
कभी उनका कुछ भी न ध्यान है ॥
सुख शान्ति को ता तलाश है,
साधन न एक भी पास है ।
न तो योग, जप तप, कर्म है,
न तो धर्म, पुण्य, न दान है ॥
कुछ आसरा है तो है यही,
क्यों करेंगे मुझ पै कृपा नहीं ।
इक दीनता का हूँ 'बिन्दु' मै,
वो दयालुता के निधान है ॥

पद २११

जिस क़दर श्याम से हो, लुत्फ़ो करम होने दो ।
जोशे उल्फ़त को घड़ी भर भी न कम होने दो ॥
दिल ये कहता है तसव्वुर को न घटने दे कभी ।
आँख कहती है कि दीदार सनम होने दो ॥
मचल रही है जुबाँ तर्ज़े बयानी के लिये ।
होश कहता है कि मुझ में भी तो दम होने दो ॥
जान कहती है कि क़ुर्बान मै हूँगी पहले ।
सर ये कहता है, मुझे पहले क़लम होने दो ॥
आँख के 'बिन्दु' ये कहते हैं, कि हट जाओ सभी ।
तर बतर हमसे जरा, उनके क़दम होने दो ॥

पद २१२

दुनिया तो क्या? अपनी ही हस्ती को भुला बैठे।
जिस दिन से लगन अपनी मोहन से लगा बैठे॥

हम मर मिटें फिर क्यूँ कर उनकी न नज़र कुछ हो।
इस शजरे महब्बत में क्यूँ कर न समर कुछ हो॥
तड़पी हुई आहों में क्यूँ कर न असर कुछ हो।
मुमकिन नहीं इस ज़िद की उनको न खबर कुछ हो॥

हर तौर से इस ज़िद पर एतकाद जमा बैठे।
जिस दिन से लगन अपनी, मोहन से लगा बैठे॥

माना, हैं अजब उनके अन्दाज़ ज़माने में।
एकता हैं मगर हम भी नाँदाज़ ज़माने में॥
इक दिन तो खुलेगा ही यह राज़ ज़माने का।
क़ुर्बानिये दिल देगी आवाज़ ज़माने में॥

हम दार पे सर देकर दिलदार को पा बैठे
जिस दिन से लगन अपनी मोहन से लगा बैठे॥

आशिक को कभी दम भर आराम नहीं होता।
रोने के सिवा उसका कुछ काम नहीं होता॥
है कौन जो इस फन में बदनाम नहीं होता।
मरने के सिवा इसका अञ्जाम नहीं होता॥

सब कुछ ये समझकर भी इस दिल को लुटा बैठे।
जिस दिन से लगन अपनी मोहन से लगा बैठे॥

थोड़ा सा सहारा कुछ पाया भी तो कब पाया।
बरसात का मौसम कुछ आया भी तो कब आया॥
घनश्याम इन आँखों में छाया भी तो कब छाया।
कुछ 'बिन्दु' बरसने को लाया भी तो कब तो लाया॥

जब आतिशे फ़ुरक़त में यह जिस्म जला बैठे।
जिस दिन से लगन अपनी मोहन से लगा बैठे॥

पद २१३

हमको जग ने ही खुद छोड़ा।
हमने तो जग में रहने का किया प्रयत्न न थोड़ा।
समझाने पर कभी न माना मन मस्ताना घोड़ा।
गई हेकड़ी भूल लगा जब तिरस्कार का कोड़ा॥
जिन जिनसे सम्बन्ध कठिन प्रण और प्रेम से जोड़ा।
स्वार्थ निकल जाने पर सबने क्षण में नाता तोड़ा॥
जिनके हित धन, धाम, धर्म ईश्वर से भी मुख मोड़ा।
उन सबने सुखमय जीवन पथ में, अटकाया रोड़ा॥
पीड़ा देता था विषयों का पका हुआ था फोड़ा।
अश्रु'बिन्दु' विष निकल पड़ा जब अन्तःकरण निचोड़ा॥

पद २१४

(होली)

इधर लाली है, उधर श्याम लाल होली में।
देखें क्या रङ्ग दिखाते हैं भला होली में॥
नजर की चुटकियाँ दोनों की दौड़तीं थीं, मगर-
न जाने किसका हृदय किसने मला होली में॥

ये ज़िद पड़ी थी, कि पीछे हटाये कौन किसे ?
मुक़ाबिला ये था दोनों का भला होली में।
कभी जुदा था, कभी एक था, दोनों का स्वरूप।
ये श्याम गौर की प्यारी थी कला होली में॥
किसी को कुछ भी हार जीत जो देखी न वहाँ।
तो 'बिन्दु' दोनों पै दिल हार चला होली में॥

पद २१५

(हिंडोला)

हिंडोरे झूलत दोऊ सरकार।
श्री मिथलेश लली सँग राजत श्री अवधेश कुमार।
दामिन लरजि गरजि घन बरसत रिमझिम पड़त फुहार।
झुकि झुकि लाल लली मुख निरखत मानत मोद अपार॥
मानहुँ अरुण 'बिन्दु' पङ्कज पर भ्रमर भ्रमत बहुबार॥

पद २१६

बाँका झूला सिय साजन का री।
मोतिनहार, बन्दनवार, हीरे हज़ार की क़तार।
बार, बार छबि निहार, रतिपति निज मद भूला री॥
बाँका झूला० ॥१॥

चम्पा चमेली, मोतिया बेली जुही अकेली, छवि सकेली।
झेलि मेलि, करत केलि, फूलों की महक से फूला री ॥
बाँका झूला० ॥२॥
तापै विराज अवधराज, जनकजा समेत आज ।
लखत लाज त्याग, सुजन छविहरण त्रिविध शलारी ॥
बाँका झूलारी ॥३॥
अरुण बरण मंगल करण, दोऊ पिय प्यारी के चरण।
शरण 'विन्दु' पातकी के, सोई जीवन धन झूलारा ॥
बाँका झूला० ॥४॥

पद २१७

चलो सखि चलियेरी जहाँ झूलत युगल किशोरी।
घटा घिर आई बूंदे झरिलाईं शोर करें दादुर, चातक,
कोकिल नाचत मौर । झूलत युगल किशोर ॥
अवधविहारी, जनकदुलारी, झूमि झूमि झमक झुकत,
झोंकन सों झकझोर । झूलत युगल किशोर ॥
सखियाँ झुलावें, मीठे स्वर गावें, अम्बुनिधि अनँद को,
जनु लेत तरङ्ग हिलोर। झूलत युगल किशोर ॥
प्रभा सम सिया, चन्द्र सियपिय, लखि सुख पावत प्यास बुझावत
'बिन्दु' चकोर । झूलत अवध किशोर ॥

पद २१८

दोऊ जन लेत लतन की ओटैं,
कछु पुरवाइ चलत घन गरजत, कछु बूँदन की चोटैं ।
डरपति सिया, पट छाँह करत पिय, बाँधि भुजन की कोटैं ॥
उत फहरत पचरङ्गी पगिया इत चूनर की गोटैं ।
यह छवि लखि दृग 'बिन्दु' प्रिय प्रीतम के पाँय पलोटैं ॥

पद २१६

भीजत कुञ्जन में दोऊ अटके,
प्रिय पाहुने भये विटपन के, पावन सरयू तटके ।
पवन झकोर लर्ली मुख मोरति छिपत छोर पिय पटके ।
युगल स्वरूप अनूप छठा लखि, रति मनोज मन भटके ।
इक टक छवि रस 'बिन्दु' पियत दृग पलभर हटत न हटके ॥

पद २२०

अवधनाथ, बृजनाथ, तुम्हारा सदा सदा में दास रहूँ ।
जहाँ जहाँ भी जन्मूँ जगमें पद पंकज के पास रहूँ ॥
मणि पर्वत या गोवर्द्धन गिरिका तृण मूल बना देना ।
या प्रमोद बन, या बृन्दाबन का, फलफूल बना देना ॥
या सरिता सरजू, वा कालिन्द्री का कूल बना देना ।
अवध भूमि, ब्रजभूमि, कहीं के पथ की धूल बना देना ॥
या बन कर शर चाप रहूँ, या बन बंशी बाँस रहूँ ।
जहाँ जहाँ भी जन्मूँ जगमें पदपंकज के पास रहूँ ॥
ब्रज निकुञ्ज की बाट बनूँ, या अवधपुरी की हाट बनूँ ।
बनूँ सुदामा अश्रु 'बिन्दु' या केवट गङ्गा घाट बनूँ
या ब्रजेश का गुणगायक, या कौशलेश का भाट बनूँ ।
शुक का हृदय बनूँ, या नारद की वीणा ठाट बनूँ ॥
युगल नाम का जप करता, प्रतिपल, प्रतिक्षण, प्रतिस्वास रहूँ।
जहाँ जहाँ भी जन्मूँ जग में पद पंकज के पास रहूँ ॥

पद २२१

दीनों ने जब क्लेशित होकर जगमें हाहा कार किया ।
परब्रह्म सच्चिदानन्द परमेश्वर ने अवतार लिया ॥

रावण राक्षस के बल से भू-मण्डल सारा हिलता था ।
ऋषि मुनि ज्ञानी, सभ्य सज्जनों का कुछ पता न मिलता था ॥
अन्यायों का नया रंग इस पृथ्वी तल पर खिलता था ।
कोड़ो से द्विज साधु, सुरों का कलित कलेवर छिलता था ॥
दीन देश पर जब अत्याचारों ने ही अधिकार किया ।
परब्रह्म सच्चिदानन्द परमेश्वर ने अवतार लिया ॥
दुष्कर्मों से पीड़ित होकर भूमि सुरों के पास गई ।
ब्रह्मादिक ने सुना कहानी उसकी करुणा क्लेश मयी ॥
देख धरा का भार भगवती विबुधों का बेचैन हुई
जगदीश्वर के सन्मुख सबने रक्खा यह आपत्ति नई ॥
धेनु रूप धारण करके धरणी ने करुण पुकार किया ।
परब्रह्म सच्चिदानन्द परमेश्वर ने अवतार लिया ॥
आर्त्त प्रार्थना को सुनकर नभ वाणी से निकला वरदान ॥
धीरज धरो हृदय में क्यू करते हो यह सन्ताप महान् ॥
नहीं सहन कर सकता मैं भी दीनों का इतना अपमान ।
शीघ्र अवध में दशरथ गृह होगा मेरा अवतार स्थान ॥
इस प्रकार सबको सुस्थिर प्रभुवर ने वारम्वार किया ।
परब्रह्म सच्चिदानन्द परमेश्वर ने अवतार लिया ॥
आज वही नौमी है जिस नवमी में प्रकटे रामलला ।
सगुण रूप से दिखलाई माधुर्य और ऐश्वर्य कला ॥
दुखितजनों के अश्रु 'बिन्दु' शस्त्रों से त्रिभुवन भार टला ।
उसी वीर जननी तिथि की हम याद करें क्यू कर न भला ॥
जिस तिथ ने सर्वस्वहीन भारत का फिर शृङ्गार किया ।
परब्रह्म सच्चिदानन्द परमेश्वर ने अवतार लिया ॥

धार्मिक जगत् एवं संकीर्तन जगत्

का

अद्वितीय मासिक-पत्र

(प्रेम सन्देश)

संस्थापक--

पूज्यपाद गोस्वामी पं० श्री बिन्दु जी महाराज

वार्षिक चन्दा २।-)

यदि आप अनेक प्रसिद्ध सन्त, विद्वान अनुभवी, एवं साहित्यिक महानुभावों के लेख, कविता, कहानियों का रसास्वादन करना चाहें तो इस पत्र के ग्राहक अवश्य बनें।

प्रार्थी

व्यवस्थापक—

प्रेम सन्देश कार्यालय,

(प्रेमधाम वृन्दावन (यू० पी०)

ध्यान रखें—

१—यदि श्री गोस्वामी पण्डित बिन्दु जी महराज से पत्र व्यवहार करना चाहें तो पते में प्रेमधाम,, श्रीवृन्दावन (मथुरा) लिखकर भेजें।

२—यदि पुस्तकों के विषय में या नियम आदि के विषय में कुछ पूछना हो अथवा वी० पी० आदि मँगाना हो तो पते में—

मैनेजर—प्रेमधाम, ब्रह्मकुण्ड,

वृन्दावन (मथुरा) लिखकर भेजें

३—उपरोक्त नियम से विपरीत पत्र भेजने पर यदि आपके पत्र का उत्तर न भेजा जा सके, या उत्तर देर में भेजा जाय तो आप शिकायत करने के हक़दार न होंगे।

४—यह भी ध्यान रहे कि श्री पं० गोस्वामी जी महराज के नाम के जो पत्र (बन्द लिफ़ाफे में) होते हैं वह कार्यालय में नहीं खोले जाते। इसलिये पुस्तक आदि सम्बन्धी पत्र यदि खुले रूप में कार्ड वग़ैरह भेजें तो उत्तम है।

प्रार्थी—

मैनेजर—कथा कार्यालय,

प्रेमधाम, ब्रह्मकुण्ड वृन्दावन (मथुरा)